श्री काशी-खण्ड

(अध्याय ६५ से ६७)

'श्री वेदव्यास' और 'घण्टाकर्ण कुण्ड'
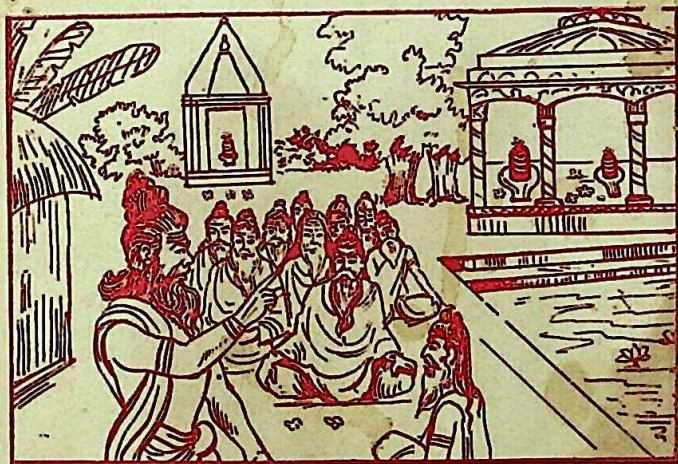
लेखक
बैकुण्ठनाथ उपाध्याय

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

(अध्याय ६५ से ६७)

'श्री वेदव्यास'
और
'घण्टाकर्ण-कुण्ड'

लेखक
वैकुण्ठनाथ उपाध्याय

हर ! हर ! महादेव !

बाबा 'विश्वनाथ' के प्रतीक, काशिराज महाराज
श्रीविभूतिनारायण सिंहजी'
को
सादर समर्पित

काशी के गौरव वेदमूर्ति
विद्वच्छिरोमणि शास्त्ररत्नाकर कैलाशवासी पण्डितराज
श्रीराजेश्वर शास्त्री द्राविड़
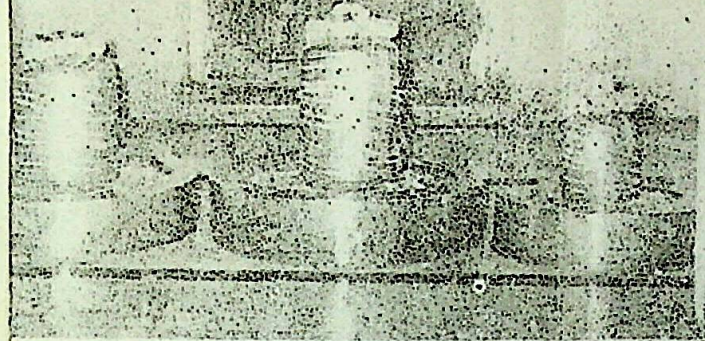
रामनगर दुर्ग स्थित व्यास मन्दिर में
श्री शुकदेवेश्वर श्री व्यासेश्वर श्री विश्वेश्वर

श्रीव्यासेश्वर (घण्टाकर्ण कुण्ड पर पीछे गणेशजी)
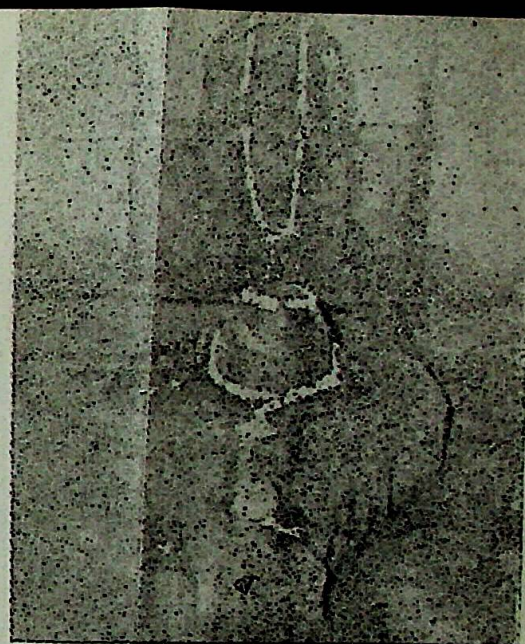
गंगा-तट पर काशीराज के राजभवन का दृश्य

श्री व्यासेश्वर मंदिर (खम्भों वाला) श्री नरिबण्डेश्वर मंदिर (गुम्मद वाला)
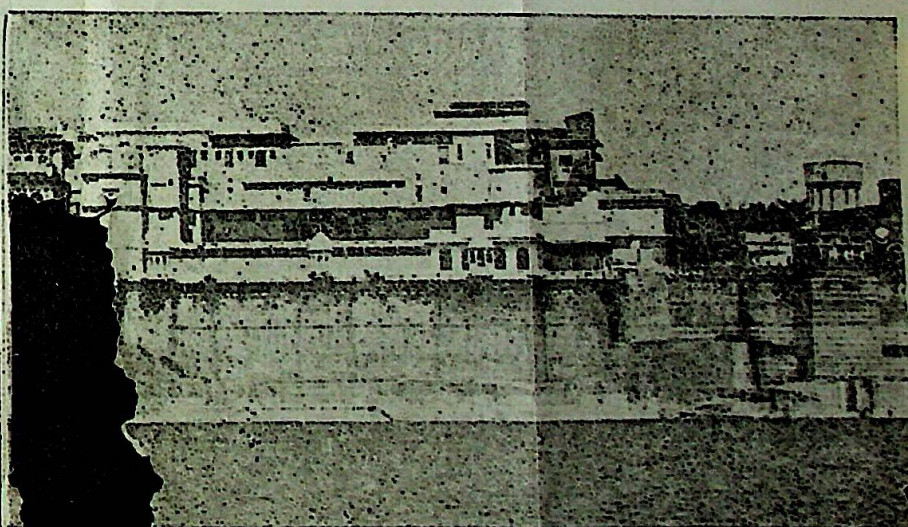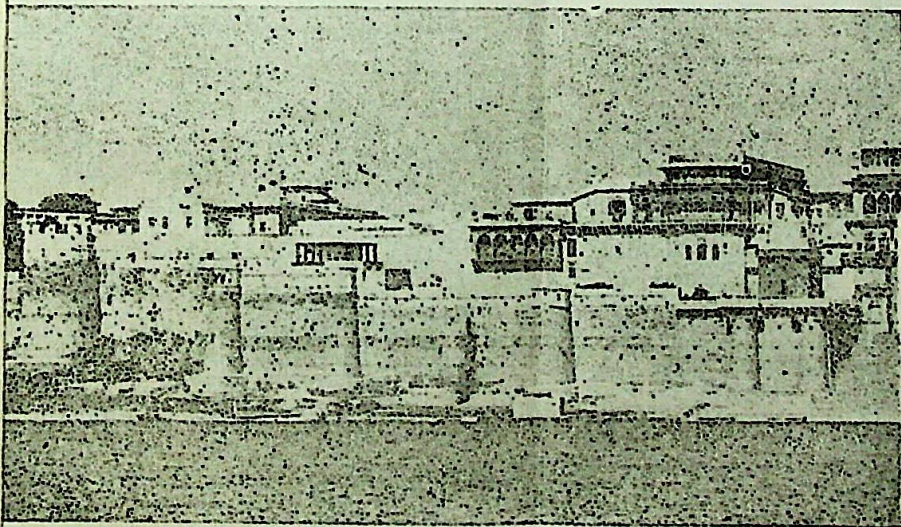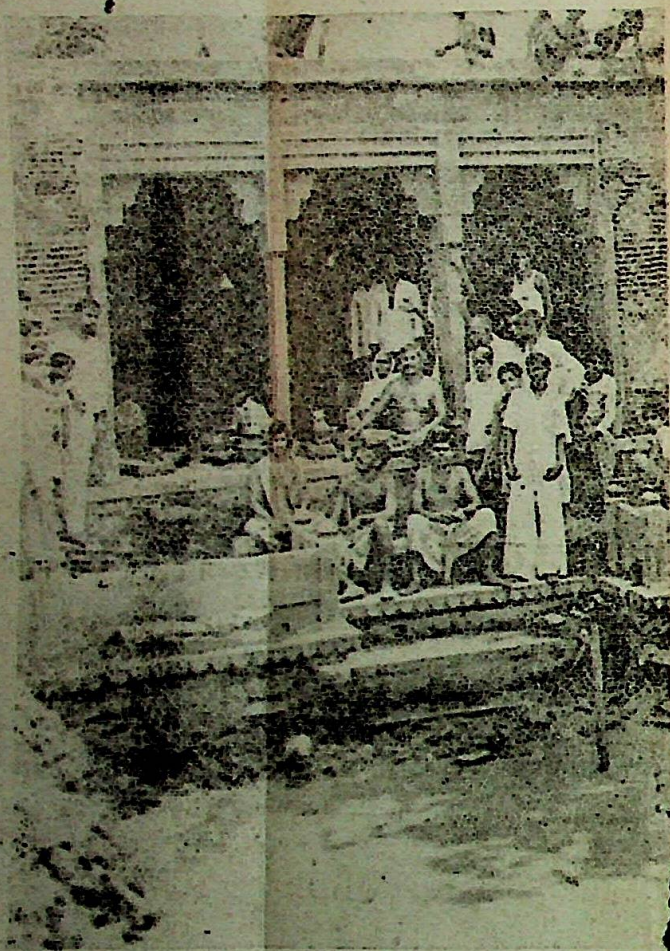
दालान जो अब जल में डूब गया है इसमें भी घण्टा कर्ण[illegible]
और महोदरेश्वर के अतिरिक्त अन्य छोटे लिंग नीचे [illegible]
कुण्ड का दृश्य

श्री घण्टा कर्णेश्वर (बीच वाला लिंग)
श्री महोदेश्वर (बड़ालिंग) दलान में

आमुख

॥ श्रीगुरुः शरणम् ॥

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक में विवेक को आस्तिकपक्ष का नायक तथा महामोह को नास्तिकपक्ष का नायक के रूप में चुना है। विवेक सत्व-प्रधान होने के कारण प्रकाशशील एवं महामोह तमःप्रधान होने से अन्धकारशील है। ज्ञान का कार्य प्रकाश है तथा अज्ञान का कार्य अन्धकार है। प्रकाश एवं अन्धकार परस्पर विरुद्ध होने के कारण उनमें शत्रुता होना स्वाभाविक है। ज्ञानोत्पत्ति के लिए विवेक ने विशेषरूप से तीर्थक्षेत्रों को अपनाया है एवं वहाँ पर ज्ञान का अवरोध करने के लिए विपक्षी महामोह भी पूर्ण प्रयत्नशील है।

क्षमा, वस्तुविचार, यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) नियम (शुचिता, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान), आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, एवं समाधि विवेक के कार्यकर्ता हैं। एवं उनके प्रतिद्वन्द्वी काम, क्रोध, लोभ, मद, मात्सर्य एवं अहङ्कार आदि हैं। काशी में भी उक्त दोनों नायकों का आगमन हुआ है। यह बात उक्त नाटक को देखने से स्पष्ट प्रतीत होती है।

ऐसी स्थिति में काशीवासी भी महामोह के चक्र में फँसकर अधर्म के आचरण में प्रवृत्त हो सकते हैं। इससे बचने के लिए उन्हें ज्ञानगङ्गा का सेवन और शम्भुपूजन में प्रवृत्त होना होगा जो सत्सङ्गति के बिना सुलभ नहीं है। सत्सङ्गति बुद्धि की जड़ता एवं पाप का अपहरण; वाणी में सत्यसेचन; मनःप्रसाद, सन्मान एवं कीर्ति की अभिवृद्धि करती है। अतएव गोस्वामी जी ने कहा है—

सतसंगति मुद मङ्गल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला॥

कलियुग में राजस और तामस वृत्तियों का उत्कर्ष रहने के कारण मुक्तिक्षेत्रों में सर्वश्रेष्ठ काशीपुरी प्राप्त होने पर भी पुनः बाहर जाने की प्रवृत्ति हो सकती है। तथा काशी में निवास करते हुए भी काशीवास के (काशीखण्डोक्त) नियमों के अतिक्रमण की स्थिति निरन्तर है। उससे लोगों को सावधान करने हेतु काशीखण्ड के इस अंक में श्री विश्वेश्वर वेदव्यास-परिसंवाद प्रस्तुत है। जिसके मनन से ज्ञात होता है कि काशी में वास नियमपूर्वक ही करना चाहिए। अन्यथा विपरीत आचरण करने पर मृत्यूपरान्त उन्हें भैरवी यातना भोगनी ही पड़ेगी। और आगे चलकर उनकी वंश-परम्परा विद्या, धन एवं मुक्ति से वंचित होगी।

अतः ऐहिक तथा पारलौकिक जीवन को सुखी एवं समृद्धिशाली बनाने के लिए धर्म, ज्ञान, वैराग्य तथा ऐश्वर्य से युक्त सात्त्विक तत्त्व की स्थापना का प्रयास करना होगा। इसके विरुद्ध अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य एवं अनैश्वर्य से युक्त तत्त्वों के बढ़ाने से विनाश ही होगा।

ऐसी स्थिति में श्री वैकुण्ठनाथ उपाध्याय द्वारा प्रकाशित काशी-खण्ड को पढ़कर लोग काशीखण्डोक्त नियमों का पालन कर अपना जीवन शान्तिपूर्वक बनावें तथा उसके लिए भगवान उन्हें सद्बुद्धि प्रदान करें। यही विश्वनाथ से प्रार्थना है।

श्रीगणेश्वर द्राविड़

निवेदन

आज महाशिवरात्रि के पुण्य पर्व पर काशी के न्यायपीठ गौतम ऋषि के आश्रम में स्थित श्री गौतमेश्वर के समक्ष काशी अधिपति भगवान विश्वनाथ के प्रतीक महाराजाधिराज काशीराज को काशीखण्ड का २५ वाँ पुष्प अर्पित करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्ता हो रही है।

प्रस्तुत अंक में भगवान विश्वनाथ की राजधानी काशी में कृष्णद्वैपायन परमवैष्णव श्री वेदव्यास जी का आगमन, श्री विष्णु द्वारा उन्हें शंकर की महिमा का उद्‌बोधन, व्यास जी द्वारा काशी की महिमा का वर्णन, व्यास जी के शिव-भक्ति की परीक्षा तथा काशीवासियों को उनके द्वारा शापित करने पर भगवान विश्वनाथ की आज्ञानुसार काशी के बाहर जाने की घटना से हमें यह ज्ञान ग्रहण करना चाहिए कि 'काशी' में रहते हुए 'काशी-धर्म' का पालन किस प्रकार हम करें।

काशी अथवा काशीवासियों की निन्दा करना, उपेक्षा करना एवं तिरस्कृत करना भगवान विश्वनाथ को अत्यन्त असह्य है। जब उन्होंने महर्षि वेदव्यास को क्षमा नहीं किया तो हम पामर जीवों की क्या गिनती है? काशी में वास करते हुए यहाँ के धर्म-स्थानों की सेवा एवं रक्षा तथा काशी के संविधान का पालन करते हुए यहाँ की देव-तीर्थ यात्रा में मन लगाये रखने पर ही हमें आवागमन से मुक्ति मिल सकती है। अन्यथा अन्त समय में हम काशी से बाहर कर दिये जा सकते हैं और इस प्रकार काशी में सारा जीवन व्यतीत करने पर भी हम 'मोक्ष' प्राप्त न कर सकेंगे। यहाँ के तीर्थों, देव मंदिरों और यात्राओं की रक्षा करना हमारा पुनीत कर्त्तव्य है।

भगवान विश्वनाथ से प्रार्थना है कि वह हमें शक्ति प्रदान करें कि मैं अगले कार्तिकमास में अपना संकल्प पूर्ण कर सकूं और भगवान अपनी नगरी की सेवा का अवसर मुझे अन्त तक देने की परम अनुकम्पा करेंगे।

वैकुण्ठनाथ उपाध्याय

धन्यवाद

सर्व प्रथम भगवान् विश्वनाथ के चरणों में नतमस्तक होता हूँ पश्चात् श्रुतिप्रसिद्ध काशीराज महाराजाधिराज श्री विभूति नारायण सिंह जु देव का नमन करता हूँ। श्री महाराज ने पूर्व की भाँति इस २५ वें भाग का प्रकाशनोद्घाटन करना स्वीकार किया।

प्रातः स्मरणीय कैलाशवासी वेदमूर्ति पूज्यपाद गुरुजी पण्डितराज श्री राजेश्वरशास्त्री द्राविड़ जी तथा कैलाशवासी पितामः पं० रामनारायण जी उपाध्याय को प्रणाम करता हूँ।

प्रस्तुत अंक के प्रकाशन में हम आचार्य पं० विश्वनाथ शास्त्री दातार; पं० जनार्दन शास्त्री पाण्डेय, पं० गणेश्वर शास्त्री द्राविड़, पं० उदयकृष्ण जी नागर के विशेश आभारी हैं। आपके सहयोग के लिए धन्यवाद है।

श्री-राधेश्याम जी खेमका, श्रीचम्पालाल जी, श्रीशत्रुघ्न जी व्यास छविकार श्री मन्नू सिंह जी चित्रकार, अन्नपूर्णा ब्लाक वर्क्स व श्री काली प्रसाद जी को भी हम धन्यवाद देते हैं जिन्होंने समय से ग्रन्थ निकालने में पूर्ण सहयोग दिया है।

—सिद्धनाथ उपाध्याय

—०—

विषय सूची

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अध्याय ६५

श्री वेदव्यास घण्टाकर्ण तीर्थ पर

विश्वेशं माधवं ढुण्ढि दण्डपाणि च भैरवम् ।
वन्दे काशीं गुहां गंगां भवानीं मणिकर्णिकाम् ॥

श्री वेदव्यास ने अपने भविष्य चरित्र का जो श्री कार्तिकेय द्वारा अगस्त्य से कहा गया था। उसका वर्णन करते हुए 'नैमिषारण्य क्षेत्र' में कहा कि हे महाबुद्धे ! सूत सुनो।

श्री कार्तिकेय जी ने कहा था कि हे मित्रावरुणनन्दन ! पराशरात्मज महर्षि व्यास जिस प्रकार भविष्य में मोह से ग्रसित होंगे उसे सुनो।

व्यास जी चारो वेदों को अनेक शाखाओं के भेद से विभक्त कर, सूतादि पौराणिकों को अट्ठारह पुराण पढ़ावेंगे। तथा श्रुति, स्मृति व पुराणों के तत्व का मर्मज्ञान वाला सर्व मनोहारी 'महाभारत' नामक ग्रंथ लिखेंगे। वह ग्रंथ समस्त पापों का हरण करने वाला एवं शान्ति प्रदाता होगा। उस महाभारत के सुनने मात्र से 'ब्रह्महत्या' दूर भागेगी।

श्री स्कन्द जी ने आगे कहा कि एक बार व्यास जी भूमण्डल का भ्रमण करते हुए नैमिषारण्य क्षेत्र में गये। वहाँ पर उन्होंने अट्ठारह हजार शौनक आदि तपस्वी मुनियों को देखा। वे तपस्वी भाल पर 'त्रिपुण्ड' धारण किये, गले में रुद्राक्ष की माला और सर्वांग में भस्म धारण किए हुए भक्ति के साथ रुद्र-सूक्त का जप और शिवलिंग की आराधना तथा 'शिव' नाम का भजन कर रहे थे।

वे तपस्वी लोग दृढ़ता के साथ कह रहे थे कि एकमेव भगवान विश्वनाथ ही 'मुक्ति' को देने वाले हैं। व्यास जी ने उन लोगों को कट्टर 'शैव' देखकर अपनी तर्जनी अंगुली को उठाकर उच्चस्वर से कहा कि मैंने सभी शास्त्रों का मंथन करके यही निश्चय किया है कि भगवान 'विष्णु' ही सबके स्वामी हैं अतः उन्हीं की सेवा करनी चाहिए। वेद, पुराण, रामायण, महाभारत इत्यादि ग्रंथों के आदि और अन्त में 'श्रीहरि' ही व्याप्त हैं।

सब लोग विष्णु का ध्यान करें

व्यास जी शपथ पूर्वक आगे कहने लगे कि मैं यह सत्य कहता हूँ कि वेद से बढ़कर दूसरा कोई शास्त्र नहीं है और भगवान विष्णु से

बढ़कर कोई देवता नहीं हैं। एकमेव श्री लक्ष्मीश्वर सबकुछ देने वाले हैं अतः सबको भगवान् श्री लक्ष्मीनाथ का ही ध्यान करना चाहिए। इस मृत्युलोक में भोग और मोक्ष देने वाले भगवान् श्री जनार्दन को छोड़ अन्य कोई नहीं है अतः सुख चाहने वालों को चाहिए कि उन्हीं की सेवा करें। जो मन्दमति वाले श्री केशव को छोड़ अन्य को भजते हैं वे इस संसार-चक्र में बारम्बार जन्म लेते हैं और मरते हैं। श्रीहरि ही समस्त संसार के स्वामी और पालक हैं। उन्हीं की सेवा करने वाले ही त्रैलोक्य में सेवनीय होते हैं। श्री विष्णु ही सबको धर्म और सभी प्रकार के अर्थ व कामनाओं को पूर्ण करने वाले व मोक्ष प्रदाता हैं। जो लोग श्री शार्ङ्गधर को छोड़कर अन्य किसी को भजते हैं उन्हें वेद विहीन ब्राह्मण की भाँति सब कर्मों से बाहर कर देना ही उत्तम है।

काशी में कहने पर ही श्रद्धा होगी

व्यासजी की इस प्रकार की बातें सुनकर नैमिषारण्य निवासी मुनि कापने लगे और कहने लगे कि हे महामते! पाराशर्य! मुने! आपने वेदों का विभाग किया है, आप पुराणों के तत्वज्ञाता हैं, चारो वेदार्थ का निश्चय हेतु ही 'महाभारत' ग्रंथ के रचयिता हैं, आप हम सब के लिए पूजनीय हैं। हे सत्यवतीनन्दन! इस समय यहाँ आपसे बढ़कर दूसरा कोई तत्वज्ञाता नहीं है। आपने तर्जनी अंगुली उठाकर शपथ पूर्वक जो बातें कही हैं वह सब यहाँ के बालकों के मन में बैठ नहीं रही है। आपके वचनों पर हमें तभी विश्वास और श्रद्धा होगी जब यही बातें आप शिवपुरी 'काशी' में शपथपूर्वक अपनी प्रतिज्ञा को कहेंगे। अतः हे व्यास जी! जिस काशी में स्वयं भगवान विश्वनाथ जी विराज रहे हैं, जहाँ युग-धर्म व्याप्त नहीं होता, जो भूमि, भूलोक से अलग समझी जाती है। वैसी वाराणसी पुरी में आप जाएँ। इतना सुन बहुत क्रोधित हो १० हजार शिष्यों के साथ श्री व्यासजी वहाँ से चल दिए।

व्यास जी काशी के विष्णुकांची क्षेत्र में

काशी में पहुँच कर व्यास जी ने १० हजार शिष्यों के साथ सर्व-प्रथम 'पंचनद-तीर्थं' पंचगंगाघाट पर स्नान किया और वहीं पर भगवान बिन्दुमाधव का दर्शन-पूजन करने के बाद 'पादोदकतीर्थ में जाकर स्नान कर वहाँ भगवान 'आदिकेशव' का पूजन किया और पाँच दिनों तक वहाँ रहकर बड़े प्रसन्न मन हो आगे-पीछे वैष्णवों से घिरे, शंख ध्वनि करते हुए वहाँ से चल दिए।

मार्ग में वह जय विष्णो! हृषिकेष! गोविन्द! मधुसूदन! अच्युत! अनन्त! वैकुण्ठ! माधव! उपेन्द्र! केशव! त्रिविक्रम! गदापाणे! शार्ङ्गपाणे! जनार्दन! श्रीवत्सवक्षः! श्रीकान्त! पीताम्बर! मुरान्तक! कैटभारे! बलिध्वंसिन्! कंसारे! केशि-सूदन! नारायण! असुररिपो! कृष्ण! शौरे! चतुर्भुज! देवकी हृदयानन्द! यशोदानन्दवर्धन! पुण्डरीकाक्ष! दैत्यारे! दामोदर! बलप्रिय! बलारातिस्तुत! हरे! वासुदेव! वसुप्रद! विष्वक्सेन! महाबाहो! वनमालिन्! नरोत्तम! अधोक्षज! क्षमाधार! पद्मनाभ! जलेशय! नृसिंह! यज्ञवाराह! गोप! गोपालवल्लभ! गोपीपते! गुणातीत! गरुडध्वज! गोत्रभृत्! चाणूरमर्दन! आद्यन्तरहित! त्रैलोक्यरक्षण! आनन्दस्वरूप! नीलोत्पलद्युते! कौस्तुभभूषण! पूतनाघातुशोषण! आप की जय हो। हे जगद्रक्षामणे! नरकहारक! आप हम लोगों की रक्षा करें, रक्षा करें। हे सहस्रशीर्ष! पुरुष आपही इन्द्र को सुख देने वाले हैं। भूत और भविष्य के सब कुछ कर्त्ता आपही पुराण-पुरुष हैं। इस प्रकार नाम माला से वनमाली की स्तुति करते, नाचते हुए प्रसन्नता के साथ व्यास जी श्री विश्वनाथ जी के मन्दिर के पास जा पहुँचे।

व्यास जी वंशी बजाए

वहां पर ज्ञानवापी के सामने तुलसी की माला कण्ठ में धारण किए हुए परमभागवतों के साथ करताल लेकर व्यास जी कीर्तन

करते हुए नाचने लगे। वंशी बजाते हुए वहाँ स्वयं श्रुतिधर बन गये। इस प्रकार न्यृत्य समाप्त करते हुए अपने शिष्यों के बीच व्यास जी अपना दाहिना हाथ उठाकर बार-बार उच्चस्वर में श्लोकों का गान करने लगे और कहने लगे कि सभी वाग्जालों का मंथन करने के बाद यही निश्चय होता है कि सबके स्वामी हरि हैं और हरि ही सबके लिए सेवनीय हैं।

श्री नन्दीगण ने व्यासजी का भुजस्तम्भन किया

ज्योंहि अपनी पूर्वोक्त बातों को व्यास जी कहने लगे कि 'नन्दीगण ने वहां पर आकर उनके दाहिने हाथ और वाणी का स्तम्भन कर दिया।

श्री विष्णु को भय

श्री व्यास के हाथ का स्तम्भन होते ही वहाँ पर स्वयं भगवान्

विष्णु उपस्थित होकर व्यास जी से कहने लगे कि हे व्यास ! तुमने यह सब कहकर घोर अपराध किया है। इसमें सन्देह नहीं है। तुमने जो यह अपराध किया है उससे मुझे बड़ा भय लग रहा है।

भगवान् विश्वनाथ से बढ़कर कोई नहीं

श्री विष्णु ने आगे कहा कि इस भू-मण्डल में श्री विश्वनाथ ही सब कुछ हैं उनसे बढ़कर दूसरा कोई नहीं है। उन्होंने मुझे यह 'चक्र' दिया है। श्री विश्वनाथ की कृपा से ही मैं लक्ष्मीपति बना हूँ। श्री शम्भू ने ही त्रैलोक्य की रक्षा करने की मुझे शक्ति प्रदान किया है। उन्हीं की कृपा और वरदान से मैं ऐश्वर्यशाली बना हूँ। अतः हे व्यास ! यदि तुम मेरा कल्याण चाहते हो तो अब से भगवान् महादेव की स्तुति करो और फिर इस प्रकार की बात मत करना।

कण्ठ स्पर्श कर विष्णु चले गये

श्री विष्णु से इतना सुनते ही व्यासजी ने संकेत द्वारा विष्णु से अपना कण्ठ स्पर्श करने को कहा। क्योंकि नन्दी द्वारा उनकी वाणी स्तम्भित (रुक) हो गयी थी। वाणी खुलते ही वे भगवान् पिनाकपाणि की स्तुति कर सकते थे पर वैसा नहीं किया तब व्यास शरीर से दोष को निकालने के हेतु विष्णु जी गुप्त रूप से व्यास के कण्ठ को स्पर्श कर चले गये।

व्यास जी द्वारा श्री विश्वेश्वर की स्तुति

कण्ठ खुलते ही भुजा (स्तम्भित हुये भुजा) को उठाये सत्यवती-नन्दन भगवान् विश्वेश्वर की स्तुति करते हुए कहने लगे कि एक मात्र रुद्र ही अद्वितीय हैं, वे ब्रह्म हैं, उनके सिवाय इस ब्रह्माण्ड में कुछ भी नहीं है।

व्यास जी आगे कहने लगे कि क्षीर-समुद्र के मंथन के समय उसमें से जो ज्वाला की भाँति कालकूट निकला जिससे विष्णु, कृष्ण-

वर्ण के हो गये थे उसी को महेश्वर ने पान किया है। श्री महादेव के बाणरूप में विष्णु ही हैं, सारथी ब्रह्मा जी हैं इस प्रकार समस्त भूमि ही जिनका रथ बना हो, चारो वेद उसके अश्व बने हों, और जिसके एक ही बाण से त्रिपुरासुर का धाम जल गया था वैसे भगवान् महादेव से बढ़कर भला दूसरा कौन है। त्रैलोक्य को जीतने वाला 'कामदेव' जिसके फूलों के बाण से भस्म हो गया था अतः उस महेश्वर से बढ़कर दूसरा कोई भी स्तुति योग्य नहीं है।

जिस भगवान महेश्वर को वेद, ब्रह्मा, विष्णु, मन और वाणी भी नहीं जान सकी उस देवधिदेव श्री विश्वनाथ को यथार्थरूप से अल्पवुद्धि वाला मैं कैसे जान सकता हूं। जो शंकर स्वयं विश्व के आधार होते हुए भी सर्वत्र सबमें सदा विराजमान रहते हैं, जो स्वयं ही विश्व के रचयिता-पालक व संहारकर्त्ता हैं, उनका आदि और अन्त नहीं है, जो सबके अन्तकारक हैं उसी श्री महादेव को मैं प्रणाम करता हूं।

श्री व्यास ने आगे कहा कि जिसका एक बार उच्चारण करने से अश्वमेधयज्ञ की भाँति फल प्राप्त होता है, जिन्हें एक बार प्रणाम करने पर इन्द्र की सम्पत्ति तुच्छ प्रतीत होती है, जिसकी स्तुति करने से सत्यलोक प्राप्त होता है। ऐसे महेश्वर को छोड़कर मैं अन्य किसी की स्तुति नहीं करता। भगवान त्रिलोचन को छोड़कर मैं अन्य किसी को भी प्रणाम नहीं करता। यही सत्य है इसमें जरा भी झूठ नहीं समझना चाहिए।

व्यास उवाच ।

एको रुद्रो न द्वितीयो यतस्तद् ब्रह्मैवैकं नेह नानास्ति किञ्चित् ।
यद्यप्यन्यऽ कोऽपि वा कुत्रचिद् वा व्याचष्टान्तद्यस्य शक्तिर्मदग्रे ॥१॥

यः क्षीराब्धेर्मन्दराघातजातो ज्वालामाली कालकूटोऽतिभीमः ।
तं सोढुं वा कोऽपरोऽभून्महेशाद् यत्कीलाभिः कृष्णतामाप विष्णुः ॥२॥

यद्बाणोऽभूच्छ्रीपतिर्यस्य यन्ता लोकेशो यत्स्यन्दनं भूः समस्ता।
वाहा वेदा यस्य येनेषुपाताद् दग्धा ग्रामास्त्रैपुरास्तत्समः कः ॥३॥
यं कन्दर्पो वीक्षमाणः समानं देवैरन्यैर्भस्मजातः स्वयं हि।
पौष्पैर्वाणैः सर्वविश्वैकजेता को वा स्तुत्यः कामजेतुस्ततोऽन्यः ॥४॥
यं वै वेदो वेद नो नैव विष्णुर्नो वा वेधा नो मनो नैव वाणी।
तं देवेशं मादृशः कोऽल्पमेधा याथात्म्याद् वै वेत्यहो विश्वनाथम् ॥५॥
यस्मिन् सर्वं वस्तु सर्वत्र सर्वो यो वै कर्ता योऽविता योऽपहर्ता।
नो यस्यादिर्यः समस्तादिरेको नो यस्यान्तो योऽन्तकृत् तं नतोऽस्मि ॥६॥
यस्यैकाख्या वाजिमेधेन तुल्या यस्था नत्या चैकयाल्पेन्द्रलक्ष्मीः।
यस्य स्तुत्या लभ्यते सत्यलोका यस्यार्चातो मोक्षलक्ष्मीरदूरा ॥७॥
नान्यं देवं वेद्म्यहं श्रीमहेशान्नान्यं देवं स्तौमि शम्भोर्ऋतेऽहम्।
नान्यं देवं वा नमामि त्रिनेत्रात् सत्यं सत्यं सत्यमेतन्मृषा न ॥८॥
इत्थं यावत् स्तौति शम्भुं महर्षिस्तावन्नन्दी शाम्भवाद् दृक्प्रसादात्।
तद्दोः स्तम्भं त्यक्तवांश्चावभाषे स्मायं स्मायं ब्राह्मणेभ्यो नमो वः ॥९॥

महर्षि वेदव्यास जी इस प्रकार से जब श्री महादेव की स्तुति करने लगे तभी भगवान महेश्वर की चेष्टा समझते हुए नन्दी ने उनके उठे हाथ को नीचे कर दिया और मुस्कुराते हुए कहा कि 'यहाँ उपस्थित सभी ब्राह्मणों को नमस्कार है'।

नन्दी ने आगे कहा कि हे व्यास! तुम्हारे द्वारा रचित इस अष्टक स्तुति का जो पाठ करेगा उस पर भगवान शंकर अति प्रसन्न होंगे। इस शिव सान्निध्यकारक अष्टक का प्रातःकाल प्रयास करके पाठ करने से सभी दुःस्वप्नों की शान्ति हो जाएगी। यदि कोई मातृघाती, पितृहन्ता, गोहत्यारा, बालकघ्नी, सुरापायी और स्वर्ण चोर भी क्यों न हो वह इस स्तुति का जप करेगा तो वह पाप रहित हो जाएगा।

घण्टाकर्ण तीर्थ पर परम वैष्णव वेदव्यास 'शैव' बने

श्री स्कन्द जी ने कहा कि हे अगस्त्य ! तभी से काशी के घण्टा-कर्ण-तीर्थ पर श्री व्यास जी शिवलिंग स्थापित करके 'श्री व्यासेश्वर' की आराधना करने लगे इस प्रकार वह 'शैव' हो गये। वे नित्य सर्वांग में भस्म लगाते, रुद्राक्ष धारण करते और रुद्रसूक्त का गान करते हुए लिंग-पूजन में ही लग गये।

अन्यत्र मरने पर भी काशी-मरण का फल

श्री स्कन्द जी ने कहा कि हे अगस्त्य ! उसी समय से श्री व्यास काशी के तत्व को समझकर 'क्षेत्र-सन्यास' लेकर कभी काशी को नहीं छोड़ते थे। जो मनुष्य घण्टाकर्ण-कुण्ड में स्नानकर व्यासेश्वर का दर्शन करता है उसे कहीं भी मरने पर काशी में मरने का फल प्राप्त होता है।

घण्टाकर्ण तीर्थ और व्यासेश्वर

काशीपुरी में घण्टाकर्ण तीर्थ पर श्री व्यासेश्वर लिंग का पूजन करने वाला मनुष्य कभी ज्ञानभ्रष्ट नहीं होता और न कभी पापों में पड़ता है। जो लोग श्री व्यासेश्वर के भक्त होते हैं उन्हें कलि, पाप और क्षेत्र-उपसर्ग का कभी भय नहीं होता। काशी वासियों को काशी-क्षेत्र में किए गये पापों से मुक्त होने के लिए घण्टाकर्ण-तीर्थ में स्नान कर प्रयास कर श्री व्यासेश्वर का दर्शन करना चाहिए।

इस प्रकार स्कन्द पुराणान्तर्गत चतुर्थ खण्ड 'काशीखण्ड' के ९५ वे अध्याय में वर्णित 'व्यास भुजस्तम्भन' एवं घण्टाकर्ण तीर्थ माहात्म्य का भाषा में अनुवाद किया गया।

अध्याय ६६

श्री वेदव्यास को काशी से बाहर जाने का आदेश

श्री अगस्त्य ने अपनी जिज्ञासा व्यक्त करते हुए पूछा कि हे स्कन्द ! जब श्री वेदव्यास शिवभक्ति परायण, काशी-क्षेत्र के रहस्य ज्ञाता, शिव के प्रभाव को जानने वाले और परमज्ञानी होंगे तब वह वाराणसी पुरी को शाप क्यों देंगे ?

इस पर श्री स्कन्द ने कहा कि हे अगस्त्य ! तुम्हारा प्रश्न उचित ही है। अब मैं उनका भविष्य तुम्हें सुनाता हूँ। हे मुने ! जब से नन्दी ने व्यास जी का भुजस्तम्भन किया तबसे वह सदा महेश्वर की स्तुति-गान करने लगे। वैसे तो काशी में अनेक तीर्थ एवं लिंग विद्यमान हैं तथापि श्री विश्वेश्वर का दर्शन और मणिकर्णिका में स्नान करने से ही मनुष्य-मुक्ति का अधिकारी होता है। क्योंकि लिंगों में श्री विश्वेश्वर और तीर्थों में मणिकर्णिका ही श्रेष्ठ हैं। इसी कारण से नित्य वेदव्यास यह दोनों कार्य करने लगे। अर्थात् मणिकर्णिका में स्नान और श्री विश्वेश्वर का दर्शन तथा मुक्ति-मण्ड में बैठकर व्यर्थ की बातों को छोड़ श्री महादेव की महिमा का गुणगान करने लगे। अपने शिष्यों के समक्ष वह काशी क्षेत्र की महिमा का नित्य वर्णन करते रहे।

चक्रपुष्करणी तीर्थ में नित्य स्नान करें

वेदव्यास जी का कथन रहा कि काशी में अच्छे या बुरे जो भी कर्म किए जाते हैं उसका अन्त प्रलयकाल में भी नहीं होता अतः यहाँ

अच्छे कर्म ही करने चाहिए। जो लोग 'सिद्धि' प्राप्त करना चाहते हों वे 'मणिकर्णिका' कभी न छोड़ें। प्रतिदिन 'चक्रपुष्करणी' तीर्थ में स्नान कर पत्र, पुष्प, फल और जल से भगवान विश्वेश्वर का पूजन करना ही श्रेष्ठ-कर्म है।

गुप्तदान और विघ्न दूर करने हेतु अन्नदान करें

लोगों को अपने वर्ण और आश्रम धर्म के अनुसार रहते हुए प्रतिदिन श्रद्धा भक्ति के साथ काशी क्षेत्र की महिमा सुननी चाहिए। काशी में शक्ति भर गुप्तदान करें तथा विघ्नों को हटाने हेतु अन्न का दान करें।

काशी में रहने वालों का धर्म

काशी-क्षेत्र में रहने वालों को चाहिए कि सदैव दूसरों का उपकार करें और पर्वों पर विशेषरूप से स्नान-दान करें, विशेष उत्सव के साथ पूजन करें। यहाँ अधिक यात्रा करें और देवताओं का अवश्य पूजन करें। काशीक्षेत्र में रहनेवाले को कभी भी दूसरे की स्त्री और धन का उपयोग नहीं करना चाहिए। किसी का अपकार न करे और किसी के मर्म की बात भी नहीं करनी चाहिए। किसी का अपवाद न करे और न किसी से असूया (डाह) ही करे। प्राण यदि कण्ठगत भी हो जाए तब भी झूठ न बोले। भले या अनभले यदि यहाँ के रहने वाले की रक्षा हेतु झूठ बोलते हैं तो इसमें कोई हानि की बात न होगी। प्रयास कर यहाँ रहने वाले प्राणिमात्र की रक्षा करनी चाहिए।

श्री विश्वेश्वर सन्तुष्ट होते हैं

श्री स्कन्द जी ने आगे बताया कि हे अगस्त्य काशी क्षेत्र की महिमा के सम्बन्ध में व्यास जी अपने शिष्यों से आगे कहने लगे कि प्रयत्न करके काशी में एक जीव की भी जो प्राण रक्षा करता है तो उसे त्रैलोक्य मात्र की रक्षा करने का फल प्राप्त होता है। जो लोग

काशी में 'क्षेत्र-सन्यास' लेकर निवास करते हैं उन्हें जीवन्मुक्त एवं 'रुद्रस्वरूप' ही समझना उचित होगा। ऐसे लोगों के सन्तुष्ट होने पर स्वयं भगवान् सन्तुष्ट होते हैं। अतः ऐसे लोगों की पूजा करनी चाहिए और उन्हें नमस्कार भी करना चाहिए।

क्षेत्र-सन्यास लेने वालों के योग-क्षेम की व्यवस्था हो

श्री व्यास जी आगे कहते हैं कि दूर देश में बसने वालों को चाहिए कि जो लोग काशी में क्षेत्र-सन्यास लिए हों उनके योग-क्षेम की व्यवस्था करें। क्षेत्र-सन्यास लेने वालों को इन्द्रियों के प्रसार और मन की चंचलता को प्रयास करके सदा दूर करना चाहिए। यहाँ रहने वाले बुद्धिमानों को मरण और मोक्ष की अभिलाषा न करते हुए शरीर के शोषण का उपाय भी नहीं करना चाहिए। अपितु व्रत, स्नान हेतु शरीर की स्वस्थता तथा महाफल की समृद्धि के लिए दीर्घ जीवी होने की चिन्ता करनी चाहिए। काशी में अपने परमकल्याण की वृद्धि के लिए 'आत्मा' की रक्षा करें। कभी आत्मा के त्यागने की बात काशी में न सोचे। काशी में जो श्रेयस्कर फल एक दिन में मिलता है वह अन्यत्र सैकड़ों वर्ष में भी नहीं प्राप्त होता। अन्यत्र जीवन भर योगाभ्याग से जो फल मिलता है वह काशी में मात्र एक बार प्राणायाम करने से मिल जाता है।

हजारों जन्म के पुण्य से 'विश्वनाथ' का दर्शन होता है

मणिकर्णिका में एक डुबकी लगाने से जो फल प्राप्त होता है वह फल समस्त तीर्थों में स्नान करने पर भी नहीं मिलता। जीवन भर सभी लिंगों की आराधना करने से जो पुण्य नहीं प्राप्त होता वह पुण्य श्रद्धाभक्ति के साथ एकबार श्री विश्वेश्वर की पूजा करने से होता है। हजारों जन्मों के पुण्य बल के आधार पर ही श्री विश्व-नाथ का दर्शन प्राप्त होता है। विधिपूर्वक करोड़ों गौ का दान करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल श्री विश्वनाथ के दर्शन मात्र से

प्राप्त हो जाता है। महर्षियों ने सोलह प्रकार के दानों से जिस फल की प्राप्ति कही है वह फल 'श्रीविश्वेश्वर' पर मात्र पुष्प चढ़ा देने से प्राप्त हो जाता है। अश्वमेघ आदि 'यज्ञ' करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल श्री विश्वनाथ को मात्र पंचामृत स्नान कराने से प्राप्त होता है।

श्री अगस्त्य जी ने आगे कहा कि हजारों बाजपेय-यज्ञ करने से जो फल प्राप्त होता है उससे सौगुना अधिक फल श्री विश्वनाथ को बहुमूल्य नैवेद्य लगाने से प्राप्त होता है। जो मनुष्य उन्हें ध्वजा, छत्र, चामर आदि से सज्जित करता है वह भू-मण्डल में एकछत्र राज्य का भोग करता है। जो कोई श्री विश्वेश्वर की महापूजा में उसकी सामग्री अर्पित करता है उसे इस संसार में कहीं और कभी सम्पत्ति का अभाव नहीं होता। जो ममुष्य भगवत्पूजा के लिये समस्त ऋतुओं के पुष्पों से परिपूर्ण पुष्पवाटिका बनाता है उसके गृह के आगन में 'कल्पवृक्ष' की शीतल छाया बनी रहती है। श्री विश्वनाथ को दुग्ध से स्नान कराने हेतु जो मनुष्य 'गो' का दान करता है उसके पूर्व-पुरुष लोग क्षीरसागर के तटवासी होते हैं। श्री विश्वेश्वर के राज मन्दिर में जो कोई सफेदी कराता है या चित्र आदि बनवाता है उसके लिए कैलाश में सुसज्जित भवन बन जाता है।

एकसौ आठ आहुति या जप का करोड़ गुना फल

काशीपुरी में ब्राह्मण, सन्यासी तथा वियोगियों को श्रद्धा के साथ जो कोई भोजन कराता है उसे प्रत्येक व्यक्ति की गणना में करोड़-गुना फल प्राप्त होता है। काशी में तप, दान, स्नान, हवन, जप आदि करके भगवान विश्वनाथ को सन्तुष्ट करना चाहिए। अन्यत्र करोड़ जप करने से जो फल प्राप्त होता है वह काशी में अष्टोत्तर-(१०८) जप करने मात्र से हो जाता है। इसी प्रकार अन्यत्र कोटि (करोड़) आहुति से जो पुण्य अर्जित होता है वह काशी में १०८ आहुति देने से मिल जाता है। आनन्दवन में श्री विश्वेश्वर के

सान्निध्य में रुद्रसूक्त का पाठ करने से समग्र वेदाध्ययन करने का पुण्य प्राप्त हो जाता है। परन्तु अक्षरों का अर्थ समझते हुए रुद्रसूक्त का परायण करने वाले को जो फल मिलता है उसे कहना मेरे लिए कठिन है।

काशी में नित्य वास और उत्तर वाहिनी गंङ्गा स्नान करना ही उचित है। भारी विपत्ति पड़ने पर भी काशी कभी नहीं छोड़ना चाहिए। कारण यह है कि समस्त विपत्तियों के निवारक श्री विश्वेश्वर काशी में रक्षक बने बैठे हैं। काशी में अनुष्ठित कर्म बड़े फलदायी होते हैं। अतः यहाँ स्नान करना चाहिए ऐसा करने से इन्द्रियों की बाधा कभी नहीं होती। कारण यह कि मनुष्य में 'इन्द्रियाँ' विकार उत्पन्न करती हैं तब विघ्न उत्पन्न होते हैं फलतः काशीवास की सिद्धी नहीं हो पाती।

श्री अगस्त्य जी ने कहा कि हे कार्त्तिकेय जी! श्री वेदव्यास जो कृच्छ्र चानद्रायण आदि व्रतों का विधान कहेंगे उनको आप हमसे अभी बताने की कृपा करें।

कृच्छ्रान्द्रायण आदि व्रत

श्री अगस्त्य जी ने कहा कि हे स्वामी कार्तिकेय! कृच्छ्रचान्द्रायण व्रत के करने से मनुष्य की इन्द्रियाँ शुद्ध हो जाती हैं तो उसे कैसे किया जाता है आदि के संबंध में आप हमें बताने की कृपा करें।

श्री कार्तिकेय जी ने कहा कि कृच्छ्रचान्द्रायण व्रत का अनुष्ठान करने से मनुष्य का शरीर परम शुद्ध हो जाता है। इसमें प्रथम दिन एक समय भोजन करे, दूसरे दिन रात्रि में तीसरे दिन आयाचित भोजन करे तथा चौथे दिन उपवास करने को 'पादकृच्छ्र' व्रत कहते हैं। बड़ (बट) गूलर, कमल, बिल्वपत्र और कुशोदक को क्रम से प्रत्येक दिन पान करने को 'पर्णकृच्छ्र' व्रत कहते हैं। पिण्याक (तिल की खली), घृत, तक्र जल (मण्डा) और सत्तू (सत्तू)

क्रम से प्रतिदिन एक दिन बीच में उपवास रहकर उसे एकान्तरित दिन खाने को 'सौम्यकृच्छ्र' व्रत कहते हैं। तीन दिन प्रातः, सायं अयाचित भोजन करे और तीन दिन उपवास करे और इसी क्रम से तीन दिन एक-एक कवर मात्र भोजन करे बाद में तीन दिन उपवास करे तो इसे 'अतिकृच्छ्र' व्रत कहते हैं। इक्कीस दिन मात्र दूध पीकर रहने को 'कृच्छ्रातिकृच्छ्र' व्रत कहते हैं। बारह दिन तक निरन्तर उपवास करने को 'पराक व्रत' कहते हैं।

श्री स्कन्द जी ने आगे कहा कि जिस द्विज को 'प्रजापत्यव्रत' करना हो उसे तीन दिन प्रातःकाल, तीन दिन सायंकाल और तीन दिन आयाचित भोजन कर तीन दिन उपवास करना चाहिए। गोमूत्र, गोबर, दूध, दही, घृत और कुशोदक को क्रम से एक-एक दिन पीकर एक रात्रि में उपवास करने से "कृच्छ्र सान्तपन" व्रत कहते हैं। पहले कहे गये 'सांतपनव्रत' के छः वस्तुओं को पान न कर सातों दिव यदि उपवास करे तो उसे 'कृच्छ्र महासांतपन' व्रत कहते हैं। ब्राह्मण को यदि 'तप्तकृच्छ्र' व्रत करना हो तो दुग्ध, घृत और वायु को पान करे। पश्चात् तीन-तीन दिन केवल उष्णजल उष्ण दूध, उष्ण घृत तथा तीन दिन वायु को पीना चाहिए। इस व्रत में (चार रुपये भर) एक पल जल और एक पल दूध, दो पल घृत पान करने को 'तप्तकृच्छ्र' व्रत कहते हैं। 'एकान्हिक कृच्छ्र' व्रत करने वाले को शरीर शोधनहेतु गोमूत्र के साथ यव (जौ) खाना चाहिए।

दिनभर दोनों हाथ ऊपर उठाये हुए मात्र वायु पान करे और रात्रिभर जल में बैठा रहे तो इसे भी 'प्राजापत्यव्रत' कहते हैं। तीनों समय स्नान करके एक-एक ग्रास घटावे और शुक्लपक्ष में एक-एक ग्रास बढ़ाकर भोजन करने को 'चान्द्रायण' व्रत कहते हैं। अथवा शुक्लपक्ष में एक-एक ग्रास बढ़ावे और कृष्णपक्ष में एक-एक ग्रास

घटावे तथा अमावास्या को उपवास करने को भी 'चान्द्रायण' व्रत कहते हैं।

ब्राह्मण समाहित होकर चार कवर प्रातः और चार कवर सायंकाल भोजन करे तो उसे 'ब्राह्मणों का चन्द्रायण' व्रत कहते हैं। मध्याह्नकाल में आठकवर हविष्यान्न भोजन करने से 'यतिचान्द्रायण' व्रत कहते हैं। समाहित होकर पूरे मासभर में २४० कवर मात्र भोजन करने वाला मनुष्य चन्द्रलोक का अधिकारी होता है।

काशी की सेवा करने से विश्वेश्वर की दया होती है

श्री कार्तिकेय जी ने आगे बताया कि शरीर की शुद्धि जल से मन की शुद्धि सत्य से भूतात्मा की शुद्धि विद्या और तपस्या से तथा बुद्धि की शुद्धि 'ज्ञान' से होती है। ज्ञान की प्राप्ति यथार्थ रीति से काशी के सेवन करने से होती है। काशी के सेवन से ही भगवान विश्वनाथ की दया का उदय होता है। सभी कर्म को पूर्णरूप से निमूंल करने में समर्थ 'महोदय' की प्राप्ति होती है। अतः काशी में प्रयासकर स्नान, दान, तप, जप, पुराण श्रवण, शास्त्रोक्त धर्म-मार्ग पर चलना, प्रतिक्षण श्री बिश्वेश्वर के चरणों का स्मरण, त्रिकाल में लिंग-पूजन, लिंग की स्थापना साधुओं के साथ प्रतिदिन वार्ता करना, शिव-शिव का सदैव उच्चारण करना, अतिथि सत्कार, तीर्थ सेवियों से मैत्री आस्तिक बुद्धि, मानायमान में समान बुद्धि, निष्कामता, अनुद्धतस्वभाव, रागविहीन, अहिंसा, अप्रतिग्रह वृत्ति, दयालुचित्त, दम्भ से विरति, निर्मत्सरता, अप्रार्थित धनागम, अलोभिता अनलसता, अपरुषता और अदीनता आदि गुण काशी में वास करने वालों को सत्प्रवृत्तियों में सदा रहना चाहिए।

श्री कार्तिकेय ने कहा कि इस प्रकार श्री वेदव्यास नित्य अपने शिष्यों को उपदेश देंगे। हे अगस्त्य! व्यासजी नित्य त्रिकाल स्नान, लिंगपूजा मात्र, भिक्षा से ही भोजनादि का प्रबन्ध करते हुए काशी में वास, करेंगे।

विश्वनाथ ने व्यास की परीक्षा ली

एकबार भगवान विश्वेश्वर ने श्री व्यास जी के 'शिवभक्ति के' परीक्षा लेने हेतु पार्वती जी से कहा कि हे सुन्दरी ! आज उनके सत्व की परीक्षा हेतु व्यास को भिक्षार्थ सर्वत्र घूमने पर कहीं भी भिक्षा न मिले ऐसी व्यवस्था करो। भवानी ने भवनाशक भगवान् विश्वेश्वर की आज्ञा को प्रणाम करते हुए स्वीकार कर घर-घर से व्यास जी के भिक्षा न मिलने का प्रतिबन्ध किया। भिक्षा न मिलने से व्यास जी अपने शिष्यों सहित अत्यन्त खिन्न हो उठे। समय व्यतीत होते देख पुनः नगर में घूमने लगे। अन्य भिक्षुकों को तो भिक्षा मिली परन्तु व्यासमुनि को उस दिन कहीं भिक्षा न मिली। भिक्षा न मिलने से वह दुःखित हुए इस प्रकार सारा दिन व रात उन्होंने उपवास में ही व्यतीत किया।

भाग्यहीन की तरह व्यास को भिक्षा नहीं मिली

उसके दूसरे दिन माध्याह्निक क्रिया को सम्पन्न कर शिष्यों के साथ भिक्षार्थ वह पुनः घूमने लगे। उस दिन भी बार-बार धनि गृहस्थों के घरों का फेरा लगाते रहे परन्तु जिस प्रकार भाग्यहीन मनुष्य को धन नहीं मिलता वैसे ही श्री व्यासमुनि को भिक्षा उस दिन भी पूर्व की भाँति नहीं मिली'। नगर में घूमते-घूमते व्यास जी थक कर सोचने लगे कि क्या कारण है सुरक्षित रहते हुए भी भिक्षा क्यों नहीं मिल रही है।

वेदव्यास की चिन्ता

शिष्यों को बुलाकर श्रीव्यास ने कहा कि जान पड़ता है कि तुम लोगों को भी भिक्षा नहीं मिली आपमें से दो-तीन व्यक्ति पुनः नगर में जाकर देखो कि इस काशी नगरी में क्या हुआ है जो अथक प्रयास करने पर भी भिक्षा नहीं मिली ? हमें ऐसा लगता है कि यहाँ कोई

भारी अनिष्ट होने वाला है। इस विशाल काशी में किस कारण से एका-एक अन्न का अकाल पड़ गया। क्या सभी पुरवासी राजदण्ड के भागी तो नहीं बन गये? अथवा हम लोगों से असूया रखने वालों द्वारा भड़काने से लोग हमें भिक्षा नहीं दे रहे हैं। क्या नगरवासी किसी आपदा में पड़ एक साथ रोगग्रस्त हो गये हैं? पूर्ण पता लगाकर तुम शीघ्र आओ।

इस प्रकार की गुरु आज्ञा मिलने पर दो-तीन शिष्य नगर में गये, वहाँ लोगों की सम्पदा आदि को देखकर लौटने पर श्री व्यास जी से वह कहने लगे कि हे आराध्यचरण! इस काशी नगरी में न तो कहीं अन्न का अकाल पड़ा है और न ही कोई उपसर्ग ही हुआ है। जहाँ पर साक्षात विश्वनाथ बैठे हों, स्वर्ग तरंगिणी श्री गंगा बह रही हैं तथा आप जैसे महर्षि वास कर रहे हों वहाँ उपसर्गों का भय कैसे हो सकता है।

शिष्यों ने आगे कहा कि इस नगरी के सामान्य लोगों के पास जैसी सम्पत्ति है वैसी 'अलकापुरी' आदि को कौन कहे वैकुण्ठ-लोक में भी लोगों के पास नहीं है। हे महामुने! यहाँ के शिव निर्माल्य भोजियों के घरों में जितने रत्न हैं उतने तो स्वयं रत्नाकर समुद्र में भी नहीं होंगे। इस नगरी के घरों में जितनी अन्न की राशि है उतनी तो इन्द्रपुरी में कल्पवृक्ष ने भी कभी नहीं दी होगी। जिस नगरी में स्वयं विशालाक्षी विराजमान हों वहाँ का प्राणी निर्धन कैसे रह सकता है। मोक्षलक्ष्मी के विशालमंदिर रूप इस आनन्दवन में जब 'मुक्ति' ही सर्वसुलभ है तब अन्य कौन सी वस्तु दुर्लभ हो सकती है। यहाँ की समस्त स्त्रियाँ पातिव्रत पारायण होने के कारण साक्षात भवानी के समान होकर अपने समस्त कर्मों को शिवार्पण कर देती हैं। इस काशी में जितने पुरुष हैं वे सब गणाधिपति अथवा तारकदृष्टि 'कुमार' के समान हैं। यहाँपर जो लोग मस्तक पर त्रिपुण्ड लगाए रहते हैं वे मानो साक्षात 'चन्द्रशेखर' ही लगते हैं।

जो लोग हजारों उपसर्गों से पीड़ित होने पर भी 'काशी' को नहीं छोड़ते वे सब सर्वज्ञ के समान होते हैं। यहाँ के घरों में बच्चे 'ब्रह्म-वाद' का ही विवाद करते हैं।

काशी के निवासी अर्धनारीश्वर के समान हैं

हे महामुने ? यहाँ के लोग गंगा स्नान करने से ही निष्पाप हो 'चतुरान' हो गये हैं और सभी क्षेत्र-सन्यासी 'मोक्षलक्ष्मी' पति हो जाते हैं। यहाँ के लोग हृषिकेष, पुरुषोत्तम और अच्युत के समान दिखाई दे रहे हैं क्योंकि वे लोग इस क्षेत्र के परिग्राही हो चुके हैं। यहाँ की स्त्रियाँ हों या पुरुष सभी 'त्रिलोचन,' चतुर्भ ज, श्री कंठ और मृत्यु ंजय के समान हो गये हैं इसमें जरा भी सन्देह नहीं करना चाहिए। इस प्रकार मोक्ष-लक्ष्मी को अपने शरीर में धारण किये हुए सभी लोग 'अर्धनारीश्वर' के समान दिखाई दे रहे हैं।

फणिमणि के दीप से 'नाग' विश्वेश्वर की आरती करते हैं

इस काशी में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के बड़े-बड़े ढेर पड़े हैं। यहाँ कलि और काल कभी कोई बाधा नहीं पहुँचा सकते। यही कारण है कि काशी में वास करने वाले पुनः गर्भ में वास नहीं करते। यहाँ पर 'श्रीविश्वनाथ' के शरणार्थियों को कभी पाप का भय नहीं रहता। इसी कारण से काशी में चारो 'वेद' मूर्तिमान होकर वास करते हैं। काशी में वाग्देवी श्री सरस्वती नदी रूप में सदैव बहती रहती हैं। स्वर्ग के सभी देवता यहाँ वास करते हैं इसमें कोई मिथ्या नहीं है। नित्य रात्रि के समय 'नाग' लोग अपने रसातल से काशी में आकर अपने 'फणि-मणि' के दीपों से भगवान 'विश्वनाथ' की आरती करते हैं। कामधेनुओं के साथ सभी समुद्र यहाँ पर श्रो विश्वनाथ को पंचामृत की धारा से नित्य स्नान कराते हैं। मन्दार, पारिजात, सन्तान, हरिचन्दन और कल्पवृक्ष सभी वृक्षों के साथ यहाँ सदैव वास करते हैं। यहाँ पर नित्य सभी देवता,

अशेष महर्षिगण, सभी योगी लोग 'श्री काशीनाथ' की उपासना करते हैं।

सभी विद्याओं की राजधानी

सभी विद्याओं की जन्म-भूमि यह काशीपुरी है। यहाँ श्री लक्ष्मी का उत्तम निवास स्थान है। यह त्रिगुणात्मिका 'काशी' ही 'मुक्ति-क्षेत्र' है। इतना सुन श्री व्यास जी ने शिष्यों से कहा कि इस श्लोक को पुनः कहो।

शिष्यों ने पुनः कहा कि :—

विद्यानांचाश्रयः काशी काशी लक्ष्म्याः परालयः।
मुक्तिक्षेत्रमिदं काशी काशी सर्वा त्रयीमयी ।।

अर्थात् विद्या की खान, लक्ष्मी का गृह, त्रयीमयी काशिका प्रत्यक्ष 'मुक्ति' की देह है।

श्री स्कन्द जी ने आगे कहा कि हे कुम्भज ! इतना सुनते ही व्यास जी अत्यन्त अन्ध-नेत्र हो क्षुधा से प्रज्वलित हो 'काशी' को शाप देने लगे।

काशी को व्यास का शाप

शाप देते हुए व्यास जी ने कहा कि इस 'काशी' में तीन पुरुष (पीढ़ी) तक 'विद्या' न हो. तीन पीढ़ी तक लोगों को 'धन' न हो; तीन पीढ़ी तक लोगों को 'मुक्ति' न मिले। कारण यह है कि यहाँ के रहने वाले विद्वान अपनी 'विद्या' के अहंकार से, धनी लोग धन के अभिमान से तथा कर्म करने वाले 'मुक्ति' के अभिमान से 'भिक्षुकों' को भिक्षा नहीं देते हैं। यही बात समझकर व्यास जी ने काशी को शाप दिया।

क्रोधित हो शाप देने के बाद भी वह शिष्यों सहित भिक्षा हेतु पुनः चले। आकाश की ओर देखते हुए वह बड़ी शीघ्रता के साथ घर-घर घूमने लगे। सारी नगरी का चक्कर लगाने के बाद भी उन्हें कहीं भिक्षा नहीं मिली। सूर्य को अस्ताचल की ओर जाते देख व्यास जी अपने आश्रम की ओर चले।

जाते समय मार्ग में गृह के द्वार पर एक साधारण गृहस्थ की स्त्री का रूप धारण किए 'महादेवी' (अन्नपूर्णा) ने उनसे अपने यहाँ आतिथ्य स्वीकार करने की अति प्रार्थना की।

गृहिणी का व्यास जी से प्रार्थना

गृहिणी ने कहा कि मेरे पतिदेव वैश्वदेवादिक कर्म करके बहुत विलम्ब से प्रतिक्षा कर रहे हैं परन्तु कोई भिक्षुक नहीं दीख पड़ता। मेरे पति बिना अतिथि को भोजन कराए स्वयं भोजन नहीं करते अतः आज आप मेरे यहाँ आतिथ्य स्वीकार करें। गृहस्थ को चाहिए कि बिना अतिथि को जिमाये जो स्वयं खा लेता है वह अपने पितृ गणों के सहित 'पाप' ही भोजन करता है। अतएव आप तत्काल अपना पूजन समाप्तकर गृहस्थ-धर्म को सफल करने वाले मेरे पति का मनोरथ पूर्ण करने की कृपा करें।

यह सुनते ही आश्चर्य चकित हो व्यास जी ने उस स्त्री से कहा कि हे भद्रे तुम कौन हो और यहाँ कहाँ से आ गई हो ? हमने पहले तुम्हें कभी नहीं देखा मेरी समझ में तो यही आता है कि तुम शुद्ध हृदय वाली कोई धर्म-मूर्ति हो। क्योंकि तुम्हारा दर्शन करने से ही मेरी सभी इन्द्रियाँ बड़ी प्रसन्न हो रही हैं। हे सर्वांग सुन्दरि ! तुम अवश्य ही सुधा अमृत हो, मन्दराचल के आघात भय से भीत होकर क्षीर-समुद्र को छोड़कर मानों यहाँ चली आई हो ? या तुम चन्द्र की कला हो ? जो अमावस्या में राहु के भय से घबड़ाकर स्त्री का रूपधर इस काशी में निःशंक वास करती हो। अथवा तुम साक्षात् 'लक्ष्मी' हो जो अपने वासालय कमल को रात्रि में सकुचते हुए देख सदा खिली रहने वाली इस काशीपुरी में वास कर रही हो ? अथवा काशीवासियों के सर्वदुःखों को हरने वाली परमानन्ददात्री तुम क्षमा की मूर्ति हो ? यदि ऐसा नहीं है तो तुम इस वाराणसी नगरी की अधिष्ठात्री देवता होगी ? अथवा काशीमें रहने वाली 'मुक्ति-लक्ष्मी' तो तुम नहीं हो जो वाजपेयी ब्राह्मण और एक चाण्डाल को

समान रूप में अन्त समय में समान-दृष्टि से देखती हुई 'मुक्ति' प्रदान करने वाली देवी हो? अथवा मेरा भाग्य ही तो तुम्हारे रूप में प्रकट नहीं हुआ है? हो न हो अपने भक्तों को भवसागर से पार उतारने वाली आप 'भवानी' तो नहीं हो? जिसकी महिमा का गान इस क्षेत्र में गाया जाता है। अवश्य ही तुम न तो स्त्री हो, न किन्नरी हो, न नागीन, न गंधर्वी, न यक्षिणी ही हो, लगता है कि तुम हमारे मोह को दूर करने वाली इष्ट-देवी ही हो? अस्तु हे सुन्दरी! जो चाहोगी सो होगा। इससे हमें कोई तात्पर्य नहीं है। इस समय तो तुम्हारा दर्शन करके ही मैं तुम्हारे अधीन हो गया हूँ। तुम जो आज्ञा दोगी वैसा ही करूँगा।

श्री व्यास जी ने आगे कहा कि हे शुभ लोचने! तपस्या के काम को छोड़कर तुम्हारी जो भी आज्ञा होगी उसका मैं पालन करूँगा। तुम्हारी ऐसी साध्वी स्त्रियों की बात, साधुओं की बड़ाई को कभी नहीं बिगाड़ सकती, परन्तु हे शुभगे! तुम कौन हो? यह बात मुझसे सच-सच कहो। अथवा हे निर्मल लक्षणे! तुम्हारे इस शरीर में असत्य का लेश कहाँ है?

एक गृहस्थ की कुटुम्बिनी हूँ

श्री कार्तिकेय जी ने कहा कि हे घटोद्भव। तब विश्वजननी ने व्यासजी की इन सब बातों को सुनकर कहने लगीं कि हे मुने! यहाँ ही के गृहस्थ की मैं एक कुटुम्बिनी हूँ और आपको अपने शिष्यों के सहित भिक्षा के लिए जाते हुए नित्य ही देखती हूँ। आप मुझे नहीं जानते पर मैं आपको भलीप्रकार जानती हूँ। हे तपस्विन्! बहुत बात करने का अवसर नहीं है। जबतक सूर्यनारायण अस्त नहीं हो जाते उससे पहले ही मेरे स्वामी के आतिथ्य को आप सफल करें।

यह सुनकर व्यास महर्षि ने बड़ी नम्रता के साथ कहा कि हे

सुभगे ! मेरा एक नियम है। जहाँ पर उसका प्रतिपालन होता है वहीं पर मैं भिक्षा करता हूँ नहीं तो नहीं करता।

स्वामी की कृपा से कोई कमी नहीं

व्यास जी का कथन सुनकर भगवती ने कहा कि हे मतिमन ! आपका जोकुछ नियम हो उसे आप कहें। क्योंकि मेरे स्वामी की कृपा से यहाँ पर किसी वस्तु की कमी नहीं है।

दस हजार शिष्यों के साथ भोजन होगा

व्यास जी ने गृहिणी की बातों को सुनकर कहा कि मैं अपने दस हजार शिष्यों को अपने साथ ही भोजन कराता हूँ। सूर्य के रहते ही भोजन करता हूँ। इतना सुनते ही स्त्री ने कहा कि हे मुने ! तब आप बिलम्ब न करें। अपने शिष्यों को भी बुला लीजिए।

इस पर व्यास जी ने उस स्त्री से कहा कि हे साध्वि ! क्या तुम्हारी सिद्धि ऐसी है जिससे मेरे सब शिष्यों की तृप्ति हो जाएगी ?

इसपर उस स्त्री ने कुछ हंसकर कहा कि हे महर्षे ! पतिदेव की कृपा से मेरे घर में उतनी सामग्री सदैव सिधी हो रहती है। जितने में सभी अर्थीजन भली प्रकार से संतुष्ट हो सकेंगे वही करूँगी। हम ऐसी स्त्री नहीं कि अतिथि के आने पर घर में भोजन तैयार करें और पतिदेव को सन्देह में डालें। स्वामी के चरणों की कृपा से सब दिशाएँ व सभी मनोरथ पूर्ण हैं तथा गृह में सभी वस्तुएँ सुमज्जि हैं। आप जाएँ और जितने भी अन्नार्थी हैं उन्हें साथ में लेकर आवें।

गृहदेवी ने आगे कहा कि मेरे पति बड़े-बूढ़े हैं वह अधिक बिलम्ब नहीं सह सकते। अतः आप शीघ्र जाएँ और सूर्यास्त के पूर्व पधारकर पतिदेव के आतिथ्य को स्वीकार करें।

अन्नार्थियों की असीम तृप्ति

व्यास जी बड़े प्रसन्न होकर चारों ओर से अपने शिष्यों को

तुरन्त लौटा लाए और उन्होंने मार्ग की प्रतीक्षा कर रही देवी से कहा कि हे माता ! हम सब लोग आ गये हैं अब तुरन्त भोजन दो। सूर्य भी अस्ताचल को जाना ही चाहते हैं। इतना कहकर ज्योंहि सब लोग आँगन में पहुँचे तो मणियों की किरणराशि से सूर्य की शोभा पाकर वे सब तपस्वीलोग परम आनन्दित हुए। वहाँ पर कोई उनका पैर धोता तो कोई उनका पूजन करने लगा और कुछ लोग सबको बैठाकर भोजन परोसने लगे। उत्तमोत्तम पक्वान्नों को देखकर तथा उनके सुगन्ध को सूँघने मात्र से सब संतुष्ट हो गये। उन पक्वान्नों का भोजन करने पर अन्नार्थियों को असीम तृप्ति हो गयी। उसके बाद सबने हाथ-मुँह धोया सबको चन्दन लगा माला पहनायी गयी और सबको वस्त्र आदि भी दिया गया।

सायंकाल की सन्ध्या आदि करके गृहस्वामी के सम्मुख बैठकर उन्हें बहुतेरे आशीर्वाद आदि देकर वे लोग जाने का उपक्रम करने लगे इतने में गृहस्वामी ने अपनी गृहिणी की ओर देखकर उन्हें उसका दिया।

गृहिणी वृद्धा ने अतिथिश्रेष्ठ श्री व्यास मुनि से पूछा कि तीर्थ में निवास करने वालों का मुख्य 'धर्म' क्या है ? कृपापूर्वक बताएँ जिसका अनुकरण हम सब यहाँ रहते हुए करें।

आतिथ्य सत्कार से परम सन्तुष्ट हो प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री व्यास मुनि ने हँसते हुए परमसर्वज्ञा गृहिणी से कहने लगे कि हे स्वच्छहृदये ! मातः तुमने हम सबको उत्तमोत्तम मिष्ठान्न खिलाकर हमारा बड़ा सत्कार किया है। यह सब जो कार्य आप कर रही हैं यही धर्म है। इससे अतिरिक्त कोई दूसरा धर्म नहीं है। पतिदेव के सेवा में तत्पर रहने के कारण धर्म के मर्म को तुम अच्छी प्रकार से समझती हो। यदि मुझसे पूछना ही चाहती हो तो मैं जो कुछ जानता हूँ तुमसे कह रहा हूँ। क्योंकि पूछने पर जो कुछ ज्ञात हो उसे बताना ही उचित है।

पति की संतुष्टि ही धर्म है

श्री व्यास जी ने आगे कहा कि हे सुभगे! जिसमें आपके यह बूढ़े पति सन्तुष्ट हों वही धर्म है इसके सिवाय दूसरा कोई धर्म नहीं है।

इसपर गृहिणी ने कहा कि हे मुने! यह तो निश्चित रूप से ठीक है और शक्ति के अनुसार करती भी हूँ परन्तु मैं तो आपसे 'साधारण-धर्म' की बात पूछ रही हूँ।

साधारण धर्म

श्री व्यास जी ने इसपर कहाकि ऐसी बातों को कहना चाहिए जिससे दूसरे को क्लेश न हो, दूसरे की उन्नति देखकर उससे ईष्या नहीं करना चाहिए। जो भी कार्य करे उसे सदा विचार कर करे। अपने गृह की उन्नति कैसे हो उसे सोचना चाहिए ये ही तो साधारण 'धर्म' है।

यह सुनकर वृद्ध-बाबा ने कहा कि हे विद्वान्! इन धर्मों में से आप में कौन सा धर्म है, उसे तो कहें।

वृद्ध के बचन से व्यास जी हतप्रभ

वृद्ध के वचन सुनते ही व्यास जी हतप्रभ से हो गये और कोई भी उत्तर न दे सके।

तपोधन व्यास जी से उस वृद्ध ने पुनः पूछा कि यदि इन्हीं बातों को धर्म मानते हो तब तो 'शाप' का उत्तमदान देकर तुमने अपनी दानता का उत्तम परिचय दिया। दया और घरती की पराकाष्ठा तो आपही में दिखाई देती है। इस प्रकार काम और क्रोध को बांधकर रखना तुम्हारा ही कार्य है उद्वेग रहित बात तो तुम्हीं कहना जानते हो दूसरों की बढ़ती देखकर प्रसन्न होने की छटा तो तुम्हारे में ही दिखाई देती है। विचार करने वालों में मात्र आप ही

प्रमुख हैं। अपने घर का अभ्युदय सोचना तो मानों आपही के पल्ले पड़ा है।

शाप किसको लगता है

वृद्ध ने आगे पूछा कि हे विद्वान ! एक बात का आप उत्तर दें कि यदि अभाग्यवश कोई अपने स्वार्थ की सिद्धि न होने पर क्रोधित हो शाप देता है तो वह शाप किसपर पड़ता है ?

उत्तर में व्यास जी ने कहा कि जो कोई अपना स्वार्थ-सिद्ध न होने पर शाप देता है तो वह शाप देने वाले को ही लगता है।

वृद्ध ने इसपर कहा कि हे विप्र ! बहुत घूमने-फिरने पर भी आपको यदि भिक्षा नहीं मिली तो इसमें भला 'काशी-क्षेत्र' के वासियों का क्या दोष था जिसे आपने क्रोधित हो शाप दिया ? अब हे तपोधन ! मेरी बात सुनो। जो कोई मेरी इस राजधानी में दूसरे की सम्पत्ति को नहीं देख सकता उसे तो स्वयं शापग्रस्त समझना चाहिए।

मेरे क्षेत्र में मत रहो

वृद्ध (श्री विश्वनाथ) ने आगे कहा कि हे मुने ! शापशून्य ! मेरे इस क्षेत्र में मत रहो क्योंकि इस काशी क्षेत्र में बसने की क्षमता तुममें नहीं है। अतः तुम अभी यहाँ से बाहर चले जाओ। तुम्हारे जैसे लोगों के रहने योग्य हमारी यह मोक्ष-साधक 'क्षेत्र' नहीं है। मेरे इस क्षेत्र के निवासियों के साथ जो कोई थोड़ी सी भी दुष्टता करता है उसके फलस्वरूप उसे रुद्रपिशाच होना पड़ता है।

व्यास जी भगवती के शरणागत

भगवान विश्वेश्वर का यह वचन सुनते ही व्यास जी के तालू और ओठ चटकने लगे। वह थर-थर काँपने लगे। भगवती के शरणगत हो उनके चरणों के आगे लेटने लगे और बहुत रो-रो कर प्रार्थना करने लगे कि हे मातः ! मुझ अनाथ तथा अज्ञानी बालक को सनाथकर बचालो। हे जननी ! हम मनुष्यों का दुष्ट हृदय बहुत से अपराधों का भवन है। अतः मुझ शरणागत की रक्षा करो। आज मैं आपके शरणागत हूँ। मेरे ऊपर दया करो।

अष्टमी व चतुर्दशी को काशी में मेरा प्रवेश हो

हे शिवे ! यद्यपि श्री महादेव के शाप को अन्यथा करने की शक्ति किसी में भी नहीं है परन्तु मैं आपके शरणागत हूँ। इस दीन पर इस प्रकार दया करो जिससे प्रति अष्टमी और चतुर्दशी को मैं सदैव इस 'क्षेत्र' में प्रवेश कर सकूँ। हे पार्वती ! भगवान शंकर आपकी बात नहीं टालेंगे।

व्यास जी की विनती सुनकर करुणामयी श्री अन्नपूर्णा देवी ने भगवान 'श्री विश्वनाथ' की ओर देखा और उनकी आज्ञानुसार 'तथास्तु' कहा।

व्यास जी काशी से बाहर

इतना कहकर मंगलकारक दोनों श्री महादेव व श्री पार्वती वहीं पर अन्तर्धान हो गये और व्यास जी भी अपने ही अपराध को कहते हुए क्षेत्र से बाहर हो गये।

काशी को रात दिन देखते हैं

श्री व्यास जी रात-दिन अपनी दृष्टि से काशी को ओझल न करते हुए अष्टमी व चतुर्दशी को काशी-क्षेत्र के भीतर सदैव आते रहते हैं। लोलार्क से अग्निकोण में गंगा के पूर्वतट पर बैठे रहकर व्यास जी आज भी श्री विश्वनाथ की राजधानी की शोभा को सदैव देखते रहते हैं।

लोलार्कादग्निदिग्भागे स्वर्धुनीपूर्वरोधसि।
स्थितोह्यद्यापि पश्येत्स काशीप्रासादराजिकाम्॥

श्री स्कन्द जी ने आगे कहा कि हे अगस्त्य! इस भाँति महर्षि वेदव्यास उस क्षेत्र में शाप देवेंगे और उसी कारण वह क्षेत्र से बाहर होंगे। इसलिए जो कोई अविमुक्त-क्षेत्र का भला सोचेगा उसका भला होगा और इसके विरुद्ध कर्म करने से विपरीत फल होगा। जिसके कर्ण-कन्दरा में 'व्यास-शाप-विमोक्षण' नामक यह पवित्र अध्याय प्रवेश करेगा उसे बड़े से बड़े उपसर्गों का भय कभी नहीं होगा।

इस प्रकार स्कन्दपुराणान्तर्गत चतुर्थ काशीखण्ड के ९६ वें अध्याय में वर्णित 'व्यास-शाप-विमोचन' आख्यान का भाषा में अनुवाद किया गया?

———

अध्याय ६७

काशी के 'लिंग' और 'तीर्थ'

श्री अगस्त्य जी ने कहा कि हे शिवनन्दन ! वेदव्यास के भविष्य की घटना सुनकर मैं बाड़ा आश्चर्यान्वित हुआ हूँ। हे षडानन ! अब आप कृपा पूर्वक हमसे आनन्दकानन में जिन-जिन स्थानों पर जो लिंग स्वरूप तीर्थ है उन्हें बताएँ।

इस पर श्री स्कन्द जी ने कहा कि हे कुम्भयोने ! श्री भगवती के पूछने पर भगवान् 'श्रीहर' ने जैसा कहा था वैसा ही मैं आपको सुना रहा हूँ।

सभी 'लिंग' तीर्थ हैं

श्री देवी ने पूछा था कि हे प्रभो ! महेश्वर ! काशीधाम में जिस-जिस स्थान पर जो तीर्थ हैं उन सबका स्थान सहित आप वर्णन करें।

देवी के प्रश्न के उत्तर में भगवान श्री विश्वनाथ ने कहा कि हे विशालाक्षि ! सुनो। हे देवी ! सभी लिंग 'तीर्थ' कहे जाते हैं। लिंगों के सम्बन्ध से काशी के जलाशय 'तीर्थ' नाम से जाने जाते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, शिव और गणेश आदि की मूर्तियाँ तो होती हैं पर शिव लिंग रूप में प्रसिद्ध हैं। ये सब जहाँ रहते हैं वही तीर्थ कहा जाता है।

गोदान का सम्पूर्ण फल

भगवान् ने आगे कहा कि वाराणसी पुरी में प्रथम तीर्थ 'महादेव' ही हैं। उनके उत्तर में सारस्वतपद को देने वाला बड़ा भारी एक कूप है। क्षेत्र के उत्तर-पूर्व में स्थित उस कूप का दर्शन करने से मनुष्य पशु-पाश से मुक्त हो जाता है। उसी के पीछे मूर्तिमती

'वाराणसी' देवी विराजमान हैं। जो उनकी पूजा करता है उसे सुख-पूर्वक काशी में सदा निवास का दान वह प्रदान करती हैं। महादेव के पूर्व में 'गोप्रेक्ष' नाम का उत्तम लिंग है। इस लिंग का दर्शन करने से गोदान का सम्पूर्ण फल प्राप्त होता है। पूर्वकाल में भगवान शंकर ने 'गोलोक' से स्वयं गायों को भेजा था जो सब काशी में वहाँ आयीं, इसी कारण से उस लिंग का नाम गो-प्रेक्ष पड़ा। उसके दक्षिण में 'दधीचीश्वर' लिंग है। इसका दर्शन करने से 'यज्ञ' करने का फल प्राप्त होता है।

दधीचीश्वर के पूर्व मधुकैटभ द्वारा पूजित 'अत्रीश्वर' शोभायमान हैं। इस लिंग का दर्शन करने से विष्णु-लोक' की प्राप्ति होती है। गोप्रेक्ष के पूर्वभाग में 'विज्वर लिंग' है। इनका पूजन करने से मनुष्य एकक्षण में ज्वरहीन हो जाता है। उससे पूर्व में चारों वेदों के फल-दाता 'वेदेश्वर' विराजमान हैं। वेदेश्वर के उत्तर में क्षेत्र को जानने वाले 'आदिकेशव' हैं। उनका दर्शन करने से त्रैलोक्यमात्र के दर्शन का पुण्य प्राप्त होता है। आदिकेशव के पूर्व में 'संगमेश्वर' लिंग का दर्शन करने वाला निष्पाप हो जाता है। उसके पूर्व में चतुर्मुख ब्रह्मा जी द्वारा स्थापित 'चतुर्मुख' प्रयाग लिंग है। इसका पूजन करने से 'ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। उसी स्थान पर 'शान्तिकरी गौरी' हैं। यह देवी पूजन से प्रसन्न हो सबको शान्ति प्रदान करती हैं।

करोड़ों पितर तर जाते हैं

वरणा के पूर्व तट पर 'कुन्तीश्वर' हैं, इनका दर्शन करने से कुल को उज्ज्वल करने वाले 'पुत्र' उत्पन्न होते हैं। कुन्तीश्वर के उत्तर ओर 'कपिलधारा' नामक एक बड़ा तीर्थ है। वहाँ स्नान कर 'वृषभ-ध्वजेश्वर' का पूजन करने से 'राजसूय-यज्ञ' करने का फल मिलता है। वहाँ पर श्राद्ध करने से रौरव आदि नरकों में पड़े हुए करोड़ों पितर वहाँ से 'पितृलोक' में चले जाते हैं।

श्री स्कन्द जी ने आगे कहा कि हे मुने ! गोप्रेक्ष के उत्तर ओर 'अनुसूयेश्वर' लिंग है इनका दर्शन करने से निःसन्देह स्त्रियों को पातिव्रत्य का फल मिल जात है। इनके पूर्व में स्थित सिद्धिविनायक का पूजन कर प्रणाम करने से मनचाही सिद्धि प्राप्त होती है। इनके पश्चिम ओर हिरण्यकश्यपु द्वारा स्थापित लिंग है और वहीं पर 'हिरण्यकूप' भी है जो 'हिरण्य' और 'अश्व' सम्पत्ति प्रदान करता है। इनके पश्चिम मुंडासुरेश्वर हैं। गोप्रेक्ष के नैऋत्यकोण में अभीष्ट प्रदाता 'वृषभेश्वर' हैं।

हे मुनिनायक ! अगस्त्य ! महादेव के पश्चिम ओर स्कन्देश्वर 'लिंग' है। उस लिंग का पूजन करने वाले मेरे लोक में निवास करते हैं। उसी के समीप में 'साखेश्वर' लिंग है। वहीं पर 'विशाखेश्वर' तथा 'नैगमेयेश्वर' हैं तथा नन्दी आदि जो शिव के गण हैं उनके द्वारा हजारों लिंग भी वहीं पर हैं। उनके दर्शन करने वाले को उन-उन लोकों की प्राप्ति होती है। 'नन्दीश्वर' के पश्चिम ओर कुबुद्धि का नाश करने वाले 'शिलादेश्वर' हैं और वहीं पर महाबल प्रदान करने वाले शुभमय 'हिरण्याक्षेश्वर' भी हैं। उनके दक्षिण में सभी सुखों के प्रदाता 'अट्टहासलिंग' है। उनके उत्तर ओर 'प्रसन्नवदनेश्वर' लिंग विराजमान है। इनका दर्शन करने वाले सदा प्रसन्नवदन ही रहते हैं। वहीं उत्तर ओर 'प्रसन्नोद' नामक कुण्ड है जो निर्मलता प्रदान करता है। अट्टहास के पश्चिम में 'मित्रावरुण लिंग' है जो महापातकों का नाश करते हैं। अट्टहास के नैऋत्य कोण पर 'वृद्धवासिष्ठ' नामक लिंग है उनका पूजन करने वाले को बड़ा भारी ज्ञान प्राप्त होता है। वसिष्ठेश्वर के समीप ही विष्णुलोक के प्रदाता 'कृष्णेश्वर' हैं। उसी के पीछे भक्ति बढ़ाने वाले 'प्रह्लादेश्वर' हैं भगवान, अपने शिव-भक्तों पर अनुग्रह करने हेतु स्वयं उस लिंग में लीन हुए हैं। अतः प्रह्लादेश्वर के पूर्व 'स्वलीन' नामक लिंग का प्रयास कर पूजन करना चाहिए क्योंकि परमानन्द चाहने वालों को

जो गति होती है वही गति 'स्वलीनेश्वर' के समीप शरीर त्यागने वाले की होती है।

स्वलीन-लिंग के सामने ही 'वैरोचनेश्वर' हैं उनके उत्तर में महाबल को बढ़ाने वाले 'बलीश्वर' हैं। वहीं पर पूजकों को मनोवांछित फल देनेवाला 'बाणेश्वर' लिंग है। चन्द्रेश्वर से पूर्व ओर 'विद्येश्वर' लिंग है। इनका पूजन करने वाले पर सब विद्याएँ प्रसन्न होती हैं। उनके दक्षिण में 'महासिद्धि' विनायक व 'वीरेश्वर' लिंग है। वहीं पर सर्वदु:खविमोचनी 'विकटा देवी' हैं, इसी स्थान को 'पंचमुद्रा' महापीठ कहते हैं। इस महापीठ में बड़े से बड़े मन्त्र का जप करने से शीघ्र सिद्धि मिलती है। इस स्थान से वायुकोण पर 'सगरेश्व' विराजमान हैं। इनका पूजन करने से अश्वमेध-यज्ञ करने का पूरा फल होता है। इनके ईशानकोण पर तिर्यगयोनि निवारक 'वलीश्वर' लिंग है। वलीश्वर के उत्तर ओर महापातकों का नाशक 'सुग्रीवेश्वर-लिंग है तथा वहीं पर ब्रह्मचर्य का फलप्रदाता 'हनूमदीश्र' लिंग भी है तथा वहीं पर महाबुद्धि देने वाला 'जाम्बवतीश्वर' लिंग है। उसके बाद गंगा के पश्चिम तट पर अश्विनीकुमारों द्वारा स्थापित 'आश्विनेयेश्वर नामक दोनों लिंगों की पूजा करनी चाहिए।

उनके उत्तर में गऊओं के दुग्ध से भरा 'भद्रह्लद कुण्ड' है। हजार कपिला का गोदान करने से जो फल प्राप्त होता है वही फल 'भद्रह्लद' में स्थान करने से होता है। जब कभी पूर्वभाद्रपद नक्षत्र से युक्त पूर्णमासी हो तो वहाँ का परम पुण्यकाल होता है। उस समय 'भद्रह्लद' में स्नान करने से अश्वमेध यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है। उस तीर पर उत्तर ओर 'भद्रेश्वर' का दर्शन करने से मनुष्य को निश्चित रूप से गो-लोक की प्राप्ति होती है।

हे मुने! भद्रेश्वर के नैऋत्यकोण में 'उपशांत शिव' विराजते हैं। उस लिंग का स्पर्श करते ही परमशान्ति मिलती है। इनका दर्शन करने से सैंकड़ों जन्मों के बटुरे पापों को त्यागकर मनुष्य मंगलराशि प्राप्त

करता है। इनके उत्तर में योनिचक्र का निवारण करने वाला 'चक्रेश्वर' लिंग हैं। इसके पूर्व में महापुण्य को बढ़ाने वाला 'चक्रह्रद' है। मनुष्य उसमें स्नान कर श्री चक्रेश्वर का दर्शन कर 'शिवलोक' में जाता है। चक्रेश्वर के नैऋत्य कोण में प्रयत्न पूर्वक 'श्री शूलेश्वर' का दर्शन करना चाहिए।

त्रिशूल गाड़ा था

वहीं बड़ा ह्रद है जिसमें स्नान करने हेतु मैंने अपना त्रिशूल गाड़ा था। शूलेश्वर के सामने वही ह्रद है। उसमें स्नान और 'देव' का दर्शन कर संसार रूपी गह्वर को छोड़ मनुष्य 'रुद्रलोक' चला जाता है। उसके पूर्व में देवर्षि श्री नारद ने घोर तप किया था और वहीं पर कुण्ड बनाकर लिंग की स्थापना की थी। जो मनुष्य वहाँ स्नान कर 'नारदेश्वर' का दर्शन करता है वह महाघोर संसार-सागर को पार करता है। इनके पूर्व में 'अवभ्रातकेश्वर' का दर्शन करने से लोग समस्त पापों से मुक्त हो निर्मल गति प्राप्त करता है। ताम्र-कुण्ड में स्नान करने पर गर्भ दुःख नहीं भोगना पड़ता। उसके वायव्य कोण पर सभी प्रकार के विघ्नों के नाशक 'विघ्नहर्ता गणेश जी' हैं। वहीं पर विघ्नहर कुण्ड भी है जिसमें स्नान करने वाला कभी विघ्न में नहीं पड़ता। उसके उत्तर ओर 'अनारक कुण्ड और अनारकेश्वर, कुण्ड है जिसमें स्नान करने से कभी नरक नहीं भोगना पड़ता। अनारकेश्वर के उत्तर वरणा तीर पर 'वरणेश्वर' है।

करोड़ गौ-दान का फल

अगस्त्य जी ने कहा कि हे महामुने। इन्हीं की आराधना कर परम शैव अक्षपाद ने स्थूल शरीर से 'शाश्वती सिद्धि' को प्राप्त किया था। इनके पश्चिम निर्वाण प्रदाता 'शैलेश्वर' हैं। उनके दक्षिण में कोटीश्वर हैं। वहीं कोटी-तीर्थ में स्नान कर कोटीश्वर का दर्शन करने वाले को करोड़ गौ-दान करने का फल प्राप्त होता है। इनके अग्निकोण में महाश्मशान स्तम्भ गड़ा है। उस खम्भे में भगवती

उमा सहित महारुद्र सदैव वास करते हैं। उस स्तम्भ को श्रृंगार आदि से शोभित करने वाला रुद्रपद को प्राप्त करता है।

वहीं 'कपालेश्वर' के समीप 'कपालमोचन' तीर्थ है। वहाँ स्नान करने से 'अश्वमेध-यज्ञ' का फल प्राप्त होता है। उसके उत्तर में ऋणमोचन तीर्थ है। उसमें स्नान करने वाला ऋण के बन्धन से मुक्त हो जाता है। वहीं पर 'अंगारक' तीर्थ है वह अंगार की भाँति उज्ज्वल रहता है। इसमें स्नान करने वाला पुनः गर्भ में वास नहीं करता। जो मनुष्य मंगलवारी चतुर्थी को इसमें स्नान करता है वह व्याधि और दुःख में कभी नहीं पड़ता।

इसके उत्तर भाग में ज्ञान प्रदाता 'विश्वकर्मेश्वर' का लिंग है और उसके उत्तर में 'महामुण्डेश्वर' का लिंग है। वहीं पर शुभोदक कूप है। उसी स्थान पर मैंने अपनी सुन्दर मुण्डमाला उतार कर रखी है। इसी कारण वहाँ पर पातक हारिणी 'महामुण्डा देवी' भी प्रकट हुई हैं। जिस स्थल पर मैंने अपना खट्वांग रखा था वहाँ पर 'खट्वांगेश्वर' लिंग प्रकट हो गया है। इसका दर्शन करने से लोग पाप रहित हो जाते हैं। उसके दक्षिण ओर 'भुवनेश्वर लिंग' और कुण्ड भी है। भुवनेश्वर कुण्ड में स्नान करने वाला 'भुवनेश्वर' हो जाता है। इनके दक्षिण में 'विमलोदक' कुण्ड और 'विमलेश्वर' हैं। उस कुण्ड में स्नान कर श्री 'विमलेश्वर' का दर्शन करने से लोग अत्यन्त विमल हो जाते हैं। वहीं पर 'त्र्यम्बक' नाम के एक शैव हो गये हैं जिसने सशरीर 'रुद्रलोक' को प्राप्त किया है।

विमलेश्वर के पश्चिम ओर भृगु महर्षि का आश्रम है। वहीं पर विधिपूर्वक लिंग का पूजन करने से मनुष्य 'शिवलोक' में चला जाता है। उसके उत्तर में महाशुभ फल देने वाले 'शुभेश्वर' हैं। इनके प्रताप से महातपस्वी 'कपिल ऋषि' परम शैवसिद्ध हो चुके हैं। वहीं पर कपिलेश्वर के पास में एक गुहा है। उस गुहा में जो कोई जाता है वह पुनः गर्भ में बास नहीं करता। वहीं पर यज्ञोदक कूप है जो अश्वमेध यज्ञ का फल प्रदान करता है यहीं कपिलेश्वर आदि

वर्णमयात्मक 'ऊँकार' हैं। मत्स्योदरी के उत्तर तट पर जो 'नादेश्वर' हैं वह तो मैं ही हूँ। नादेश्वर ही 'परब्रह्म' हैं इसीलिए वह स्थान दुःखमयी संसार से मनुष्य को मुक्त कर परमगति प्रदान करने वाला है। जब श्रीनादेश्वर का दर्शन करने गंगा भी वहाँ आती हैं तब वह मत्स्योदरी कही जाती है। उस समय वहाँ स्थान करने से बड़ा पुण्य होता है।

मत्स्योदरी और गंगा

भगवान ने आगे कहा कि हे महादेवी जब 'कपिलेश्वर' के पूर्व ओर मत्स्योदरी में गंगा आ जाती हैं तब वह संगम-योग अति दुर्लभ होता है। कपिलेश्वर के उत्तर ओर 'उद्दालकेश्वर' लिंग है। उनका दर्शन करने से परमसिद्धि प्राप्त होती है। उनके उत्तर ओर सर्वार्थसिद्धि प्रदाता 'वाष्कुलीश्वर' हैं। उसके दक्षिण में 'कौस्तुभेश्वर लिंग' है। उनकी पूजा करनेवाला मनुष्य कभी रत्नराशि से खाली नहीं रहता। उनके दक्षिण में 'शंकुकर्णेश्वर' हैं। उनकी आराधना करने वाले साधक लोग परमज्ञान को प्राप्त होते हैं। कपिलेश्वर के समीप के गुफा के द्वार पर 'अघोरेश्वर' हैं। उनके उत्तर में अश्वमेध यज्ञ का फल प्रदान करने वाला अघोरोद कूप है। वहीं पर 'गणेश्वर' और 'दमनेश्वर' का लिंग भी है। उस स्थल पर महर्षि 'गर्ग' और 'दमन' ने इसी शरीर से सिद्धि पाई है। वहाँ पर पूजन करने वाले को वांछित सिद्धि की प्राप्ति होती है। उनके दक्षिण में 'रुद्रावास-कुण्ड' है वहीं पर 'श्री रुद्रेश्वर' हैं उनकी पूजा करने से करोणों रुद्र का फल प्राप्त होता है।

वैतरणी बावली में स्नान करने वाला नरक में नहीं पड़ता

भगवान महेश्वर ने आगे का वर्णन करते हुए बताया कि हे अपर्णे! आर्द्रा नक्षत्र से युक्त चतुर्दशी होने पर रुद्र-कुण्ड में महापर्व लगता है। उस दिन उसमें स्नान कर 'रुद्रेश्वर' का पूजन करने वाला कहीं भी क्यों न मरे उसे रुद्रलोक' की प्राप्ति होती है। इनके नैऋत्यकोण में 'महालयेश्वर लिंग' है। उसके आगे पितरों की वासस्थली पितृकूप है।

वहाँ पर श्राद्धकर पिण्ड उस कूप में छोड़ने वाला अपने इक्कीस पुरुषों के साथ 'रुद्रलोक' का भागी बनता है। हे देवी! वहीं पर पश्चिम मुख वाली 'वैतरणी' बावली है। उसमें स्नान करने वाला मनुष्य कभी नरक में नहीं पड़ता। रुद्रकुण्ड से पश्चिम ओर 'बृहस्पतीश्वर' हैं। पुष्य नक्षत्र से युक्त गुरुवार को उनका दर्शन करने से दिव्य वाणी की प्राप्ति होती है।

रुद्रावास के दक्षिण में 'कामेश्वर' लिंग है और वहीं पर कामकुण्ड है। उसमें स्नान करने वाले सेवक के सोचे हुए कामनाओं की पूर्ति होती है। चैत्र शुक्लत्रयोदशी को वहाँ की यात्रा करने पर मनोकामनाओं की पूर्ति होती है। वहीं पूर्व में 'नलकूबरेश्वर' का लिंग है। उनके आगे धनधान्य की पूर्ति करने वाला पावन कूप है। नलकूबरेश्वर के पूर्व में 'सूर्याचन्द्रमसेश्वर' के दो लिंग एक साथ ही हैं। उनकी पूजा करने से अज्ञानरूपी अन्धकार का नाश होता है। उसके दक्षिण में 'अध्वकेश्वर' लिंग विराजमान है। उनका दर्शन करने से महामोह का नाश होता है। वहीं पर सिद्धि प्रदान करने वाला 'सिद्धेश्वर' लिंग है। उनके पास में 'मण्डलेश्वर' लिंग है जिनका दर्शन करने से 'मण्डलेश्वर' पद की प्राप्ति होती है।

कभी शोक नहीं होता

कामकुण्ड के समीप में सर्व सम्पत्ति प्रदाता 'च्यवनेश्वर' हैं। इनका दर्शन करने वाले को राजसूय-यज्ञ का फल प्राप्त होता है। उनके पीछे योगसिद्धि देने वाला 'सनत्कुमार लिंग' है और उसके उत्तर में 'सनन्देश्वर' लिंग है। उनके दक्षिण में 'आहुतीश्वर' लिंग है जिनका दर्शन करने से 'हवन' करने का फल प्राप्त होता है। उसके दक्षिण में पुण्यजनक 'पंचशिखरेश्वर' लिंग है। उनके पश्चिम में पुण्य की वृद्धि करने वाला 'मारकण्डेय ह्रद है उसमें स्नान करने वाले को कभी शोक नहीं होता। वहाँ का स्नान, दान आदि अक्षय पुण्य देने वाला होता है। उसके उत्तर में सिद्धों द्वारा पूज्य 'कुण्डेश्वर' लिंग है।

श्री कार्तिकेय जी ने बताया कि हे विप्रवर! बारह वर्ष तक तपश्चर्या करने का फल 'श्री कुण्डेश्वर' का दर्शन करने मात्र से प्राप्त हो जाता है। मारकण्डेय ह्रद के पूर्व में 'शाण्डिल्येश्वर' लिंग हैं। उनके पश्चिम ओर सूर्यग्रह की भाँति पापों का नाश करने वाला 'चण्डेश्वर' लिंग है। 'कपालेश्वर' के दक्षिण ओर श्रीकण्ठ-कुण्ड' है। उस कुण्ड में स्नान करने वाला भगवती लक्ष्मीदेवी की कृपा से बड़ा दाता (देने वाल) होता है। वहीं कुण्ड के समीप 'महालक्ष्मीश्वर' है। उस कुण्ड में स्नान कर 'महालक्ष्मी' का पूजन करने वाला मनुष्य दिव्य स्त्रियों द्वारा चामर आदि से सेवित होता है। स्वर्गवासी देवता लोग अपनी स्त्रियों के साथ स्वर्ग से जब मत्स्योदरी तीर्थ की ओर चलते हैं तब उसी मार्ग से आते जाते हैं।

सभी रोगों का नाश होता है

हे मुनिश्वर! इसी कारण से उस स्थान का नाम 'स्वर्गद्वार' पड़ा है। उस कुण्ड के दक्षिण ओर ब्रह्मपद प्रदान करने वाला एक लिंग है उसी जगह 'गायत्रीश्वर' और 'सावित्रीश्वर' दो लिंग हैं। मत्स्योदरी के तट पर 'सरस्वतीश्वर लिंग' है। इनके पूर्व में तपःश्री को बढ़ाने वाला लिंग है। लक्ष्मीश्वर के पूर्व में उग्रेश्वर का लिंग है। इनका दर्शन करने वाला अपनी जातियों में स्मरणीय हो जाता है। उसके दक्षिण में 'उग्रतुण्ड' हैं। इसमें स्नान करने वाले को 'कनखल तीर्थ' में स्नान करने का फल प्राप्त होता है। उसके पश्चिम ओर 'करवीरेश्वर' का लिंग अवस्थित है। जिनका दर्शन करने से मनुष्य के सभी रोगों का नाश होता है। उसके वायव्यकोण में पापों का नाश करने वाला 'मरीचीश्वर' लिंग है। वहीं पर मरीचीकुण्ड है इसके पीछे इन्द्रकुण्ड और 'इन्द्रेश्वर' हैं। इन्द्रेश्वर के दक्षिण कर्कोटक वापी और 'कर्कोटेश्वर' लिंग है। इनका दर्शन करने वाला नागलोक का अधिकारी होता है। इसके पीछे ब्रह्महत्या छुड़ाने वाला 'दृमिचण्डेश्वर' लिंग है वहीं पर बड़ाभारी कुण्ड है। उसके दक्षिण में 'अग्निश्वर' का प्रसिद्ध

लिंग है और उनके पूर्व में अग्निकुण्ड भी है। इसके उत्तर में एक और कुण्ड है जिसमें स्नान करने वाला अपने पूर्व पुरुषों के साथ स्वर्ग में निवास करता है।

भगवान ने आगे कहा कि अग्नीश्वर के पूर्व में 'बालचन्द्रेश्वर हैं। इनके चारो ओर बहुत से गणों द्वारा अनेक लिंग स्थापित हैं। उन सबका दर्शन करने वाला गणाध्यक्ष पद को प्राप्त करता है। बालचन्द्र के समीप पितरों का एक कूप है। वहाँ श्राद्ध करने से सात पुरुषों का उद्धार हो जाता है। उसके पूर्व में 'विश्वेश्वर का पवित्र लिंग है। उनके पूर्व में 'वृद्धकालेश्वर' हैं। उनके समक्ष ही 'कालोदक' कूप है। वह सब रोगों को दूर करता है। जो स्त्री और पुरुष उस कूप का जल पीते हैं उनका परिवर्तन सौकरोड़ कल्प बीतने पर भी नहीं होता और वह पुनर्जन्म नहीं लेता। उस कूप पर शैव लोगों को जो कुछ दान दिया जाता है हे घटज! प्रलयकाल में भी उसका नाश नहीं होता। जो लोग वहाँ जीर्णोद्धार करते हैं वे सब 'रुद्रलोक' में जाकर सदैव सुखपूर्वक आमोद-प्रमोद करते हैं।

मृत्युंजय और दक्षेश्वर

भगवान ने आगे बताया कि वृद्धकालेश्वर के दक्षिण में अपमृत्यु का नाश करने वाले मृत्यीश (मृत्युंजय) का लिंग है और उस कूप के उत्तर में 'दक्षेश्वर' हैं। इनका पूजन करने वालों का हजारों अपराध नष्ट हो जाता हैं। दक्षेश्वर के पहले 'महाकालेश्वर' हैं और वहीं पर महाकाल कुण्ड में स्नान कर जो श्री महाकालेश्वर का पूजन करता है उसे चराचर जगतभर की पूजा का फल होता है। उनके दक्षिण में स्थित 'अन्तकेश्वर' का दर्शन करने वाले को यमराज का भय नहीं रहता।

हाथी-दान का फल

कार्त्तिकेय जी ने आगे कहा कि हे मुने! अन्तकेश्वर के दक्षिण में 'हस्तिपालेश्वर' का लिंग है इनका पूजन करने वाले को हाथी-दान

का फल प्राप्त होता है। वहीं पर ऐराबत कुण्ड और 'ऐरावतेश्वर' में इनका पूजन करने वाला धन-धान्य से पूर्ण होता है। उनके दक्षिण में कल्याण करने वाले 'मालतीश्वर' हैं। हस्तिपालेश्वर के उत्तर ओर जय प्रदान करने वाला 'जयन्तेश्वर' लिंग है। महाकाल-कुण्ड के उत्तर ओर 'बन्दीश्वर' हैं। वहीं पर काशीपुरी का पाप-नाशक विख्यात बन्दीकुण्ड है। उसमें स्नान, दान और श्राद्ध करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है। वहीं धनवन्तरीश्वरलिंग और कुण्ड है इस लिंग को 'तुंगेश्वर' और कुण्ड को वैद्येश्वर भी कहते हैं। उस कुण्ड में भगवान श्री धनवन्तरी ने आरोग्यकारिणी और अमृत-स्वरूप मृतसंजीवनी आदि अनेक औषधियाँ डाली हैं। उस कुण्ड में स्वान कर धनवन्तरीश्वर का दर्शन करने वालों के कठोरतम पापों का नाश और सभी प्रकार की व्याधियों का नाश होता है। इनके उत्तर में 'हलीशेश्वर' हैं इनका दर्शन करने वालों का भी सब रोग नष्ट हो जाता है। 'तुंगेश्वर' के दक्षिण में 'विश्वेश्वर' का लिंग है। उनके दक्षिण में 'जमदग्नीश्वर' का लिंग है और उनके पश्चिम में 'भैरवेश्वर' हैं तथा वहीं पर 'भैरव' कूप भी है। इस कूप का जल स्पर्श करने मात्र से सभी यज्ञों को करने का फल प्राप्त होता है। उस कूप के पश्चिम ओर योगसिद्धियों के प्रदाता 'श्री सुकेश्वर' हैं। उनके नैऋत्य कोण में निर्मल जल का 'व्यास-कूप' है। वहीं पर 'व्यासेश्वर' हैं। कूप जल से स्नान कर वहाँ लोग तर्पण आदि करते हैं। वहाँ पूजन करने पर मनुष्य मनोवांछित फल प्राप्त करता है। उसके पश्चिम ओर बहुत बड़ा घण्टाकर्णह्लद है।

घण्टकर्ण कुण्ड और व्यासेश्वर

घण्टाकर्णह्लद में स्नान कर श्री व्यासेश्वर का दर्शन करने वाला कहीं भी यदि मरता है तो उसे काशी में मरने का फल प्राप्त होता है। इससे सटा हुआ 'पंचचूड़ा' नामक अप्सरा का एक सरोवर है। उस सरोवर में स्नानकर 'पंचचूड़ेश्वर' का दर्शन करने वाला स्वर्ग में जाता है और पंचचूड़ का बड़ा प्रिय होता है। इससे दक्षिण में

सब प्रकार की जड़ता को धोनेवाला 'गोरीकूप' है। पंचचूड़ा के उत्तर ओर अशोक तीर्थ है। अशोक तीर्थ के उत्तर में महापापों का नाश करने वाली मन्दाकिनी तीर्थ है।

मन्दाकिनी और मध्यमेश्वर

श्री कार्त्तिकेय जी ने आगे बताया कि हे मुने! मन्दाकिनी स्वर्ग में भी परमपवित्र मानी जाती है तो इस मृत्युलोक में तो उसका क्या कहना है। उसके उत्तर में भगवान 'मध्यमेश्वर' हैं। काशी क्षेत्र के मध्य में भगवान मध्यमेश्वर वहीं पर शयन करते हैं। चैत्रमास के 'अशोकाष्टमी' को जो वहाँ पर रात्रि में जागरण करता है वह कभी शोक में नहीं पड़ता अपितु सदा आनन्द में रहता है।

मध्यमेश्वर लिंग के चारो ओर एककोस के परिमाण का सारा क्षेत्र 'मुक्तिक्षेत्र' माना जाता है। पितर लोग सदा यह चिन्तन करते रहते हैं कि हमारे वंश में कोई उत्पन्न होता जो कि संयमित मन से 'मन्दाकिनी' में स्नान कर ब्राह्मणों, सन्यासियों और शिवभक्तों को भोजन कराता है और जो मनुष्य 'मन्दाकिनी' में स्नानकर मध्यमेश्वर करता है वह अपने इक्कीस पीढ़ी के लोगों को 'रुद्रलोक' में अधिक दिनों तक वास करता है। मध्यमेश्वर के दक्षिण में 'विश्वदेवेश्वर' का पवित्र लिंग है। मात्र इन्हीं का दर्शन करने से तेरहो विश्वेदेवों के पूजन का फल प्राप्त कर लेता है। उसके पूर्व में महावीरपद के प्रदाता 'वीरभद्रेश्वर' हैं। उनके दक्षिण में श्री भद्रकाली जी विराजमान हैं। उनके पीछे 'शौनकह्रद' है। 'ह्रद' के पश्चिम में सुबुद्धि प्रदाता 'श्री शौनकेश्वर' विराजमान हैं। ह्रद में स्नान कर इनका दर्शन करने वाला दिव्यज्ञान की प्राप्ति करता है और सहज ही मृत्यु को पार कर लेता है। उनके दक्षिण में 'जम्बुकेश्वर' विराजमान हैं। इनका दर्शन करने वाला तिर्यगयोनि से मुक्त हो जाता है। उसके उत्तर में गान विद्या का प्रबोधक 'श्री 'मतंगेश्वर' हैं। उनके वायव्यकोण में चारो ओर मुनियों द्वारा स्थापित बहुतेरे सिद्धि

प्रदाता लिंग हैं। 'परब्रह्मरातेश्वर' का दर्शन करने वाला कभी अकाल मृत्यु नहीं प्राप्त करता। वहीं पर पितरों द्वारा अनेक लिंग हैं उनमें से एक 'आज्यपेश्वर' का लिंग है उन सबकी पूजा करने से पितर लोग बड़े प्रसन्न होते हैं। उससे दक्षिण में एक सिद्धकूप है। वहाँ पर हजारों सिद्ध लोग रहते हैं। वायुस्वरूप या सूर्य किरण रूप में रहने वाले बहुत से सिद्धों द्वारा स्थापित 'सिद्धेश्वर लिंग' है। इनका दर्शन करने से सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। लिंग के पश्चिम में सिद्धवापी है। उनके जल को पान करने अथवा स्नान करने से सिद्धि प्राप्त होती है। सिद्धकूप के पूर्व में 'व्याघ्रेश्वर लिंग' विराजमान हे। इनका दर्शन करने से व्याघ्र और चोर का भय नहीं रहता। इनके दक्षिण में 'ज्येष्ठेश्वर' हैं। उनके दक्षिण में आनन्दधाम 'प्रहसितेश्वर' हैं। उनके उत्तर में काशीवास का फल देने वाले 'निवासेश्वर' हैं। वहीं पर चतुःसमुद्र कूप है। जिसमें स्नान करने से समुद्र स्नान का फल प्राप्त होता है और वहीं पर ज्येष्ठा गौरी हैं। जिनका दर्शन करने वाला ज्येष्ठता प्राप्त करता है। वहीं पर दण्डखात सरोवर है। ग्रहण के पश्चात इस सरोवर में स्नान करने का बड़ा महत्व होता है उसी स्थल पर 'जैगीषव्य' मुनि की गुहा है और वहीं पर 'जैगीषव्येश्वर भी विराजमान हैं। वहाँ पर तीन रात्रि तक उपवास करने वाले को निर्मल ज्ञान की प्राप्ति होती है। वहीं समीप में 'शतकाल' लिंग है।

सौ वर्ष की आयु पूर्ण होती है

श्री कार्त्तिकेय जी ने कहा कि हे कुम्भ सम्भव! इस लिंग को प्रकट करने के लिए भगवान महेश्वर ने सौ वर्ष तक काशी में काल-यापन किया था। इस लिंग का दर्शन करने वाले को सौ वर्ष की आयु पूर्ण होती है। उसके दक्षिण में महाजप के फलदाता शातातपेश्वर हैं। उनके पश्चिम में महाफल के दाता 'हेतुकेश्वर' हैं। इनके दक्षिण में महाज्ञान प्रवर्तक 'अक्षयादेश्वर' हैं। उनके आगे

'कणादेश्वर हैं और वहीं पर पुण्योदक कूप भी हैं। उस कणाद कूप के जल से स्नान कर 'कणादेश्वर' का पूजन करने पर लोगों को कभी धन और धान्य की कमी नहीं होती। उसके दक्षिण में सज्जनों के भूतिकर्त्ता श्री भूतीश्वर भी दर्शनीय हैं। उनके पश्चिम में अघों के नाश करता 'आषाढ़ीश्वर' हैं। उनके पूर्व में 'दुर्वासेश्वर' सब कामों की सम्पत्ति प्रदाना करने हेतु विराजमान रहते हैं। उनके दक्षिण में पापों के भार को समाप्त करने वाले 'भारभूतेश्वर' हैं।

व्यासेश्वर के पूर्वांश में महाज्ञान प्रदाता 'शंखेश्वर' और लिखितेश्वर' विराजमान हैं। काशी में प्रयास कर इनका दर्शन करना चाहिए। पाशुपत व्रत को पूर्णकर उद्यापन करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल एक बार 'विश्वेश्वर' का दर्शन करने से प्राप्त होता है। उनके ईशान कोण में योगज्ञान के प्रवर्तक 'अवधूतेश्वर' हैं और सभी कलमषों का नाश करनेवाला अवधूतेश्वर तीर्थं भी वहीं है। यहाँ तीर्थ में स्थान और देवदर्शन करने से मनुष्य पशुपाश से छूट जाता है। यह 'पशुपतिश्वर' अवधूतेश्वर के पूर्व भाग में हैं। इनके दक्षिण में 'गोभिलेश्वर' हैं और उनके पीछे 'जीमूतवाहनेश्वर' हैं। इनकी सेवा करने वाला विद्याधर होता है।

गभस्तीश्वर व मंगला गौरी

पंचनद तीर्थं पर मयूखादित्य हैं वहीं पर 'गभस्तीश्वर' भी हैं। इंनके उत्तर में दधिकल्पह्लद है। इस कूप-जल से स्नान करना और गभस्तीश्वर का दर्शन मिलना बड़ा दुर्लभ है। इनके उत्तर में दधिकल्पेश्वर हैं। इनका दर्शन करने वाला मनुष्य एक कल्प भर शिवलोक में वास करता है। गभस्तीश्वर के दक्षिण में 'मंगला गौरी' की प्रसन्नता हेतु सपत्नीक ब्राह्मण को भोजन कराने से पुण्य होता है।

मंगलागौरी की एक परिक्रमा से पृथ्वी परिक्रमा का फल

मंगलागोरी की एक परिक्रमा करने से समस्त पृथ्वी की परिक्रमा का फल प्राप्त होता है। वहीं देवीके पासमें 'मुखप्रेक्षेश्वर' और उत्तरमें

सर्वसिद्धि देने वाली वदनप्रेक्षणा देवी सुशोभित हैं। 'मुखप्रेक्षेश्वर' के उत्तर ओर 'वृत्तेश्वर' और 'त्वष्ट्रीश्वर' के दो लिंग हैं। इन दोनों का दर्शन करने से सुवर्ण सहित भूमिदान का फल प्राप्त होता है। इनके उत्तर में चर्चिका देवी हैं जिनके आगे शान्ति करने वाले 'रेवतेश्वर' लिंग विराजमान हैं। उनके आगे 'पंचनदेश्वर' हैं। वहीं पर मंगला-गौरी के पश्चिम में 'मंगलोदक' नामक पवित्र बड़ा कूप है। वहीं पर उपमन्यु द्वारा स्थापित महालिंग है। वहीं पीछे 'व्याघ्रपादेश्वर' का दर्शन करने से व्याघ्र का भय दूर हो जाता है।

गभस्तीश्वर के नैऋत्यकोण में अघसमूह का नाश करने वाले 'शशांकेश्वर' हैं। इनके पश्चिम में दिव्यगति देने वाले 'चैत्ररथेश्वर' स्थित हैं। रेवतेश्वर के पश्चिम में महापातकों का नाश करने वाले 'जैमिनीश्वर' है।

रावणेश्वर के दर्शन से राक्षसों का भय नहीं होता

हे अगस्त्य! वहाँ पर अनेक ऋषियों ने 'लिंग' स्थापित किए हैं। जैमिनीश्वर के वायव्यकोण में 'रावणेश्वर' का दर्शन करने से राक्षसों का भय नहीं होता। उसके दक्षिण में 'वराहेश्वर' हैं और उनके दक्षिण में 'माण्डव्येश' हैं। इनके दक्षिण में 'प्रचण्डेश्वर' तथा उनके दक्षिण में योगेश्वर हैं। योगेश्वर के दक्षिण में 'धातेश्वर' हैं और उनके आगे 'सोमेश्वर' हैं। इनके नैऋत्य कोण में सज्जनों को सुवर्ण (कनक) देने वाले 'कनकेश्वर' विराजमान हैं। उनके उत्तर में पाँच पाण्डवों द्वारा स्थापित पाँच लिंग हैं। उनसे आगे 'संवर्तेश्वर' हैं तथा पश्चिम ओर श्वेतेश्वर' लिंग है। इसके पीछे काल से अभय दिलाने वाले 'कलशेश्वर' हैं। जिन्होंने काल केतु के काल फाँस में पड़ जाने पर 'अमृतघट' से निकला था। उसके उत्तर में पापों के नाशक चित्रगुप्तेश्वर का लिंग अवस्थित है और इनके पीछे 'दृढ़ेश्वर' हैं।

कंबलाश्वतरेश्वर और मणिकर्णिकेश्वर

कलशेश्वर के दक्षिण में 'ग्रहेश्वर' हैं और उनके दक्षिण में 'उतथ्य वामदेवेश्वर' का लिंग है। इनके दक्षिण में 'कंबलाश्वतरेश्वर' नामक शुभ प्रदान करने वाले दो लिंग है वहीं पर 'नलकूबर' पूजित एक निर्मल लिंग है और इनके दक्षिण में 'मणिकर्णिकेश्वर' हैं।

मणिकर्णिकेश्वर के उत्तर दिशा में 'पलितेश्वर' और 'जरा-हरेश्वर' लिंग है और उनके पीछे 'पापनाशन लिंग' है। पापनाशन के पश्चिम ओर 'निर्जरेश्वर' और उनके नैऋत्य में 'पितामहेश्वर' हैं। वहीं पर पितामहस्रोती तीर्थ' भी है जहां श्राद्ध करने से बड़ा फल प्राप्त होता है। उनके दक्षिण में 'वरुणेश्वर' हैं जिनके दक्षिण में बाणेश्वर हैं। पितामहस्रोतिका पर सिद्धि करने वाले 'कूषमाण्डेश्वर' हैं। जिनके पूर्व में 'राक्षसेश्वर' और दक्षिण में 'गंगेश्वर' हैं। इनके उत्तर में 'निम्नगेश्वर' वर्तमान है। वहीं पर 'वैवस्वतेश्वर' विराज रहें हैं इनका दर्शन करने से 'यमलोक' में नहीं जाना पड़ता। इनके आगे 'चक्रेश्वर' और पीछे 'अदितीश्वर' हैं। इनसे आगे बढ़ते ही 'काष्ठ-केश्वर' हैं। इन्हें देखते ही विश्वास उपजने लगता है। वहाँ पर उनकी छाया दिखाई देती है और दर्शन करने से लोग निष्पाप हो जाते हैं।

'कालेश्वर' के आगे 'तारकेश्वर' हैं और उनके आगे ही 'स्वर्ण-भारदेवेश्वर' हैं। इनके उत्तर में 'मरुत्तेश्वर' हैं और आगे 'शक्रेश्वर' हैं। उनके दक्षिण में 'रम्भेश्वर' और वहीं पर 'शशीश्वर' हैं। इनके उत्तर में लोकपालों द्वारा स्थापित अनेक लिंग हैं। वहीं पर नाग, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, अप्सरा, देवता और ऋषियों द्वारा स्थापित 'लिंग' भी हैं। शक्रेश्वर के दक्षिण में महापापहारी 'फाल्गुनेश्वर' हैं। इनके दक्षिण ओर शुभकर्त्ता 'महापाशुपतेश्वर' स्थित हैं। उनके पश्चिम में 'समुद्रेश्वर' और उत्तर में 'ईशानेश्वर' पूर्व की ओर सर्वसिद्धि प्रदाता 'लांगलीश्वर' हैं।

एक दिन के दर्शन से सैकड़ों वर्ष का फल

भगवान ने आगे बताया कि हे देवि ! जो मनुष्य राग और द्वेष को छोड़कर लांगलीश्वर की पूजा करते हैं वे सिद्धि को प्राप्त कर 'मोक्ष' के भागी होते हैं। ऐसे लोगों को मनुष्य नहीं समझना चाहिए। इन्हीं का पूजन कर मधुपिंग और श्वेतकेतु दोनों तपस्वियों ने शरीर सिद्धि प्राप्त की थी। वहीं पर नकुलीश्वर भी हैं। जो लोग मेरी भक्ति करते हैं उनके लिए ये दोनों 'लिंग' परम रहस्य रूप में हैं। उनके पास में ही मेरे प्रति प्रीति बढ़ाने वाले 'प्रीतिकेश्वर' हैं। हे देवि ! वहाँ पर एक उपवास करने पर सैकड़ों वर्ष तक व्रत करने का फल प्राप्त होता है। जो लोग शिवरात्रि आदि पर्व पर व्रतस्थ रहकर 'प्रीतिकेश्वर' के समीप एक रात जागरण करता है वह निश्चितरूप से मेरा 'गण' होता है। इनके दक्षिण में एक शुभोदका बावली है। उसका जल पीने से पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। बावली के पश्चिम 'दण्डपाणि', पूर्व में तारकेश्वर, दक्षिण में 'कालेश्वर' और उत्तर में 'नन्दिकेश्वर' रहकर सदा क्षेत्र की रक्षा करते रहते हैं। उस बावली का जल श्रद्धापूर्वक पीने से लोगों के हृदय में पूर्वोक्त तीनों लिंगों का वास होता है और उत्तम लोग सदा कृतार्थ होते हैं।

भवानी शंकर को प्रणाम करें

अविमुक्तेश्वर से सटे ही मोक्षबुद्धि के प्रदाता 'मोक्षेश्वर' विराजमान हैं। उनके उत्तर में दया के धाम 'करुणेश्वर' का पूजन करना उचित है। विश्वेश्वर के दक्षिण भाग में क्षेत्र का कल्याण करने वाले 'निकुम्भेश्वर' हैं। इनका प्रयास करके पूजन करना चाहिए। उनके पीछे की ओर सभी विघ्नों को विदीर्ण करने वाले विघ्नविनायक हैं। चतुर्थी के दिन विशेष रूप से इनकी पूजा करनी चाहिए। निकुम्भेश्वर के अग्निकोण में प्रसिद्ध एवं परम पूजनीय 'विरूपाक्षेश्वर' हैं। उनके दक्षिण में 'शुक्रेश्वर' हैं। इनके पश्चिम में भक्तों को सदैव भवसागर से पार उतारने वाले और शुभ देने वाले 'भवानी-शंकर' को प्रणाम

करना चाहिए। शुक्रेश्वर से पूर्व में 'अलकेश्वर' और 'मदालसेश्वर' का पूजन करना चाहिए। इनके पूर्व में विघ्नों का नाश करने वाले और सभी सिद्धियों को देने वाले 'गणेश्वर' विराज रहे हैं।

रघुनाथेश्वर को स्पर्श करने से ब्रह्मघाती शुद्ध होते हैं

कार्त्तिकेय जी ने आगे कहा कि लंकेश्वर रावण को मारकर श्री रामचन्द्र ने 'रघुनाथेश्वर' की स्थापना किया है उनका स्पर्श करने से ब्रह्मघाती मनुष्य तत्काल शुद्ध हो जाता है। वहीं पर 'त्रिपुरान्तकेश्वर' विराजमान हैं जो महापुण्य प्रदान करते हैं। इनके पश्चिम में 'दत्तात्रेयेश्वर' हैं और उनके दक्षिण में 'हरिकेशेश्वर' हैं। उनके बाद में 'गोकर्णेश्वर' हैं। वहीं पर गोकर्ण सरोवर है जो पापों का नाश करता है। उसके पीछे 'ध्रुवेश्वर' हैं और उनके आगे पितरों को प्रिय 'ध्रुवकुण्ड' है। उसके उत्तर में मनुष्य की पिशाचता को दूर करने वाले 'पिशाचेश्वर' हैं। उनके दक्षिण में पितृकुण्ड है वही पर पितृश्वर' है। यहाँ पर श्राद्ध करने वालों के पितृगण बड़े सन्तुष्ट होते हैं।

मुचुकुन्देश्वर और गौतमेश्वर

ध्रुवेश्वर के आगे 'तारेश्वर' हैं जिन्हें 'वैद्यनाथ' भी कहा जाता है। उनके नैऋत्य कोण में वंशवृद्धि करने वाले महाराज मनु द्वारा स्थापित 'लिंग' है। यह प्रियव्रतेश्वर लिंग वैद्यनाथ के सामने ही है। इनके दक्षिण में 'मुचुकुन्देश्वर' और गौतमेश्वर हैं। गौतमेश्वर के पश्चिम ओर 'भद्रेश्वर' हैं और उनके दक्षिण में 'ऋष्यश्रृङ्गेश्वर' हैं। उनके आगे 'ब्रह्मेश्वर' हैं तथा ईशानकोण पर पर्जन्येश्वर हैं। उनके पूर्वमें 'नहुषेश्वर' हैं। उनके आगे 'विशालाक्षी' देवी हैं। देवी के समीप में काशी में निवास देने वाले विशालाक्षीश्वर हैं। इनके दक्षिण में ज्वर का नाश करने वाले 'जरासन्धेश्वर' हैं। उनके आगे हिरण्य प्रदाता 'हिरण्याक्षेश्वर' हैं। उनके पश्चिम में 'गयाधीश्वर' और 'भगीरथेश्वर' हैं।

श्री कार्त्तिकेय जी ने आगे कहा कि हे अगस्त्य मुने ! भगीरथेश्वर से आगे 'ब्रह्मेश्वर' हैं और उनके पश्चिम ओर 'दिलीपेश्वर' हैं और एक कुण्ड भी है। इसमें स्नान करने वाले को इष्ट फल प्राप्त होता है। वहीं पर विश्वावसु द्वारा स्थापित लिंग है। उसके पूर्व में 'विघ्नेश्वर' हैं। इनके पूर्व में वाजिमेधेश्वर' हैं। दशाश्वमेध पर स्नान कर इनका दर्शन करने वाले को अश्वमेध यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है। इनके उत्तर स्थित 'मातृतीर्थ' में जो कोई भी स्नान करता है वह 'मातृकाओं' की कृपा से मनोवांछित फल प्राप्त करता है।

केदारेश्वर 'श्री महादेव' का अनुचर बनाते हैं

हे अगस्त्य ! तुम्हारे अगस्त्यकुण्ड के दक्षिण में प्रसिद्ध 'पुष्पदन्तेश्वर' हैं। उनके अग्निकोण में देवता और ऋषिगणों द्वारा स्थापित अनेक लिंग हैं। 'पुष्पदन्तेश्वर' के दक्षिण में सिद्धीश्वर हैं। इनका पंचोपचार पूजन करने से स्वप्न में परमसिद्धि को बता देते हैं। 'हरिश्चन्द्रेश्वर' की सेवा करने से राज्य का लाभ होता है। उनके पश्चिम में 'नैऋतेश्वर' हैं और उनके दक्षिण में 'अंगिरसेश्वर' हैं तथा उनके दक्षिण में 'क्षेमेश्वर' हैं। उनके दक्षिण में 'चित्रांगेश्वर' विराजमान हैं। यह केदारेश्वर लोगों को 'महादेव' का अनुचर बना देते हैं। केदारेश्वर के दक्षिण ओर चन्द्रवंशीय और सूर्यवंशीय राजाओं द्वारा स्थापित सैकड़ों हजार लिंग हैं।

लोलार्क के दक्षिण में 'अर्कविनायक' हैं। इनका पूजन करने वालों की सभी आशाएँ पूर्ण होती हैं। उनके पश्चिम में 'करन्घमेश्वर' महाफलों को देने वाले हैं। उनके पश्चिम में दुर्गाकुण्ड पर 'महादुर्गा' विराजती हैं। यह देवी अपने भक्तों के दुःखों और दुर्गति को समाप्त करती हैं।

'दुर्गाजी के दक्षिण में शुष्का असीनदी द्वारा पूजित 'शुष्केश्वर' हैं। उनके पश्चिम में 'जनकेश्वर' हैं। उनके उत्तर में 'शंकुकर्णेश्वर' हैं। उनके उत्तर में समस्त सिद्धियों के प्रदाता 'महासिद्धेश्वर' लिंग

है वहीं पर सिद्धकुण्ड है जिसमें स्नानकर महासिद्धेश्वर का दर्शन करने वाला सभी सिद्धियों को प्राप्त करता हैं। शंकुकर्णेश्वर के वायव्यकोण पर 'वायव्येश्वर' लिंग है। उनके आगे विभांडेश्वर हैं। इनके उत्तर ओर 'कहोलेश्वर' हैं। वहीं 'द्वारेश्वर' हैं और 'द्वारेश्वरी' देवी भी विराजमान हैं। इनकी आराधना करने से 'आनन्दवन' में वाससिद्धि प्राप्त होती है।

समस्त लिंगों की यात्रा का फल

श्री कार्तिकेय ने आगे कहा ! कि द्वारेश्वर के स्थान पर आयुध लेकर विविध प्रकार का रूप धारण किये 'गण' लोग काशीपुरी की रक्षा करते रहते हैं। वहीं पर 'हरिदीश्वर' और 'कात्सेयनेश्वर' हैं। पास में ही 'जांगलेश्वर' और पीछे की ओर 'मुकुटेश्वर' हैं। सर्वत्र यात्रा का फल देने वाले मुकुटकुण्ड में स्नान कर जो कोई मुकुटेश्वर का दर्शन करता है। वह भूमि योगाभ्यास या तपस्या की परम सिद्धि देने वाली है। हे मुने ! अगस्त्य उस स्थल पर सिद्धि के हेतु हजारों लिंग शोभायमान हैं।

वाराणसी की उत्तर दिशा बड़ी प्यारी है

भगवान ने आगे कहा कि हे देवी ! वाराणसी में उत्तर दिशा मुझे बड़ी प्यारी लगती है। उसमें भी पंचायतन (ऊँकारेश्वर का स्थान) स्थान देखकर मैं बड़ा प्रसन्न होता हूँ। सृष्टि, स्थिति और प्रलय कालों में सदैव मैं वहाँ पर रहता हूँ। हे प्रिये ! जो लोग इस तथ्य को जानते हैं। वे लोग पापों में कभी लिप्त नहीं होते। यह बात सर्वथा सत्य हैं। जो लोग मेरे लोक में जाना चाहते हैं। उन्हें तत्काल उसी काशी क्षेत्र में जाना चाहिए।

दर्शन-स्नान से उत्तरोत्तर फल बढ़ता है

कार्त्तिकेय जी ने कहा कि हे मुने ! मैंने संक्षेप में ही तुमसे इन लिंगों के संबंध में बताया है। इनमें से बहुत से लिंग भक्ति के कारण दो-दो तीन-तीन स्थापित किये गये हैं। उनका वर्णन मैंने

नहीं किया है। परन्तु श्रद्धा के साथ उन सबका भी पूजन करना चाहिए। जिन लिंगों, कूपों और बावलियों का वर्णन मैंने किया है बुद्धिमान लोगों को चाहिए कि उनपर पूर्ण श्रद्धा करें। सबका दर्शन और तीर्थों में स्नान करने से उत्तरोत्तर अधिक फल की प्राप्ति होती है।

अन्यत्र के देवता से बढ़कर काशी के तृण

हे मुने ! काशी के वापी, कूप और देवमूर्तियों की संख्या भला कौन कर सकता है। अन्यत्र के देवता से काशी के तृण बहुत अच्छे हैं। इसका कारण यह है कि काशी वालों को पुनर्जन्म नहीं लेना पड़ता।

तीर्थों की जन्म-भूमि 'काशी'

अगणित लिंगों से युक्त काशी ही सभी तीर्थों की जन्म-भूमि है। काशी का दर्शन करने से 'स्वर्ग' और वहां मरने पर 'मोक्ष' की प्राप्ति होती है।

भगवान ने आगे कहा है कि हे देवी ! तुम तो अपनी तपस्या के बल से मेरी प्रियतमा हुई हो, परन्तु 'काशी' स्वभाव से मेरे सुख और विश्राम की भूमि है। जो लोग काशी का नाम भी ले लेते हैं अथवा उसका अनुमोदन करते हैं वे ही लोग हे देवी ! शाख; विशाख, नन्दी, स्कन्द तथा गणेश के समान मुझे प्रिय लगते हैं। इसी प्रकार से भक्त लोग भी मेरे सच्चे सेवक होते हैं।

भूमि के भार

'काशी' वासी ही मोक्ष के अधिकारी होते हैं। क्योंकि कठोर तपस्या, बड़े-बड़े व्रत और महादान आदि करने वालों को ही 'काशी' में निवास मिलता है। जो लोग 'आनन्दवन' में वास करते हैं उन्हें मानों समस्त तीर्थों में स्नान, सभी यज्ञों की दीक्षा तथा सभी धर्मों को परिपूर्ण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ समझना चाहिए। परन्तु सुर, असुर, नाग तथा नर जो कोई अन्तिम अवस्था

में भी काशी में वास नहीं करते उन सबको भूमिपर भार ही समझना चाहिए।

काशी का चाण्डाल अन्यत्र के वैदिक ब्राह्मणों से श्रेष्ठ

भगवान विश्वनाथ नें आगे बताया कि हे देवी! काशी का चाण्डाल अन्यत्र के वैदिक ब्राह्मण से श्रेष्ठ होता है क्योंकि चाण्डाल तो 'भवसागर' पार हो जाता है पर ब्राह्मण तो उससे भी अधोगति में पड़कर सड़ा करता है।

काशी-दर्शन का फल प्राप्त होता है

हे देवी! वही मनुष्य सर्वज्ञ और दूरदर्शी होता है जो 'काशी' में मिट्टी का शरीर त्यागकर दिव्य स्वरूप धारण करता है। जो मनुष्य सभी तीर्थों के रहस्य से पूर्ण इस पवित्र अध्याय को सुनता है उसे अवश्य ही 'काशी-दर्शन' का फल प्राप्त होता है। प्रति-दिन प्रातःकाल जो लोग इस अध्याय को पढ़ते हैं। उन्हें समस्त तीर्थों के दर्शन का फल प्राप्त हो है। जो लोग इसे नित्य पढ़ते हैं उसे यमराज, उनके दूतों और पापों का भय नहीं होता। जो लोग पवित्र हो इस अध्याय का पाठ करते हैं वे लोग ब्रह्म-यज्ञ का फल प्राप्त करते हैं। जो लोग इस अध्याय का परायण करते हैं उन्हें समस्त कुण्डों में स्थान, वापियों का जल-पान करने, लिंगों का दर्शन करनें का फल प्राप्त होता है। मुझसे प्रेम रखनें वाले लोगों को चाहिए कि वे इसीका पाठ किया करें।

भगवान नें आगे कहा कि हे देवी! मात्र इस अध्याय का जप करनें से ही महाफल प्राप्त होता है। इस अध्याय को एक बार पढ़ने से जो फल प्राप्त होता है। वह संसार में बहुत से दानों को करनें पर भी नहीं होता। सभी तीर्थों में स्नान, लिंगों का दर्शन करनें से जो फल मिलता है वह सब इस अध्याय के पाठ करने से प्राप्त हो जाता है।

श्री कार्त्तिकेय जी ने कहा कि हे मुने! 'काशी-लिंगावली'

नामक इस अध्याय का पाठ करना उग्र तपस्या, भारी जप के समान है भगवान ने स्पष्ट कहा है कि मेरे द्रोही, नास्तिक, वेदनिन्दक व्यक्ति को इस उत्तम जप वाले अध्याय को कभी नहीं बताना चाहिए। ब्रह्महत्या, अगम्यागमन, अभक्ष्य भक्षण, गुरुदाराभिगमन, माता और पिता की हत्या, गो-हत्या, बाल हत्या आदि को मन, वचन और कर्म द्वारा जान में या अनजान में किये हुए पातक, उपपातक, महापातक आदि इस अध्याय के पढ़ने से समाप्त हो जाते हैं। मेरे आज्ञानुसार हे देवी! पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, कलत्र, क्षेत्र, सुख, स्वर्ग, मोक्ष आदि सभी मनोवांछित वस्तु को इस अध्याय के पाठ करने से प्राप्त होता है। इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

नन्दी का आगमन

श्री कार्त्तिकेय ने आगे कहा कि हे मुने! जिस समय भगवान शिव यह बातें जगदम्बा से कह रहे थे उसी समय नन्दी ने आकर प्रणाम किया और कहने लगे कि हे नाथ। विशाल राजमन्दिर का निर्माण समाप्त हो गया है, रथ भी सुसज्जित खड़ा है तथा ब्रह्मादि सभी देवता एकत्रित हैं। स्वयं पुण्डरीकाक्ष श्री विष्णु जी भी गरुड़ पर सवार हो अपने अनुचरों के साथ मुनियों को आगे किए हुए द्वार पर खड़े हो आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। चौदहो भुवन के सुव्रती लोग आपके 'प्रावेशिक महोत्सव' का समाचार सुनकर यहाँ एकत्रित हो गये हैं।

श्री स्कन्द जी ने आगे कहा कि नन्दी की बातें सुनकर भगवान् सदाशिव, भगवती पार्वती देवी के साथ दिव्य रथ पर सवार होकर त्रिविष्टप (त्रिलोचन) क्षेत्र से चल पड़े।

इस प्रकार स्कन्दपुराणान्तर्गत चतुर्थ काशीखण्ड के ९७ वें अध्याय में वर्णित क्षेत्र-तीर्थों की महिमा का भाषा में अनुवाद किया गया।

(आगे की कथा अगले अंक में)

श्री वेदव्यास के स्थान

प्रस्तुत अंक में श्री कृष्ण द्वैपायन 'वेदव्यास' जी काशी में विष्णु द्वारा कहे गये वचनानुसार परम 'शैव' होकर 'घण्टाकर्ण' कुण्ड पर घण्टाकर्णेश्वर और महोदरेश्वर के पूर्व ओर लिंग स्थापित कर रहने लगे। यह बुलानाला चौमुहानी से पश्चिम ओर जाते समय कुछ आगे बायीं ओर विशाल घेरे म. सं. सीके. ६०/६७ में है। इसका वर्णन हम काशी खण्ड अध्याय ५३ में पहले कर चुके हैं।

घण्टाकर्ण-कुण्ड का जल स्तर १९३४ के भूकम्प के समय लगभग १०-१२ फुट ऊँचा हो गया। श्री कुबेरनाथ सुकुल का कहना है कि उस समय इसके साथ-साथ ज्ञानवापी और नाग कूँआ का भी जलस्तर ऊँचा हुआ। 'सलेमगढ़' (बिहार) राजघराने के वर्तमान उत्तराधिकारी कुण्ड को पटवा कर उस पर दूकान, गोदाम और मकान आदि का निर्माण करवा रहे हैं। विगत सितम्बर मास में महाल के कुछ समाज सेवियों ने इस कुण्ड की सफाई का संकल्प लेकर गन्दा जल निकालना प्रारम्भ किया परिणाम स्वरूप कुण्ड के दक्षिण दालान में श्री घण्टाकर्णेश्वर, महोदरेश्वर और कोने के अलग मंदिर में श्री व्यासेश्वर की मूर्ति का दर्शन सर्वसाधारण को सुलभ हुआ।

बड़े उत्साह से सफाई का कार्य चला परन्तु ८० प्रतिशत कुण्ड के पट जाने के कारण 'जल' का पूर्ण दाब 'स्रोत' (सोते) पर नहीं पड़ा और जल पुनः बढ़ने लगा। इसी बीच पटी मिट्टी की खुदाई प्रारम्भ हुई कि उक्त राज परिवार की ओर से व्यवधान होते देख लोग हतोत्साहित हो गये। जल दालान के छज्जे तक पुनः बढ़ गया।

प्रेत द्वारा सूचना प्राप्त कर श्री स्वामी तुलसीदास जी को कुष्टिरूप में श्री हनुमान जी का दर्शन इसी घण्टाकर्ण कुण्ड पर हुआ था। यहाँ पर आज भी 'कुष्टि हनुमान' का मंदिर मकान सं. सीके. ५९/२३ में लगभग चार फुट की श्री हनुमान की मूर्ति है।

घण्टाकर्ण कुण्ड के पूर्व ओर अर्थात् कुष्टि हनुमान के पश्चिम सलेमगढ़ के राजा श्रीकण्ठ प्रसाद नारायण सिंह ने शिवालय बनाकर लिंग स्थापित किया जो 'श्रीकण्ठेश्वर' नाम से जाने जाते हैं और इनकी सेवा के लिए सम्पत्ति अर्पित किया।

श्री व्यासेश्वर के जल में डूबे रहने के कारण इसी 'श्रीकण्ठेश्वर' को ही व्यासेश्वर समझकर लोग 'गुरुपूर्णिमा' को इनका पूजन करते हैं। अस्तु कुण्ड की सफाई कराकर तीनों काशी खण्डोक्त देव को जल-समाधि से उबारा जाए और कुण्ड की मिट्टी निकाल कर भगवान नटराज की नगरी के इस पुण्य स्थली को सुन्दर स्वरूप प्रदान करना प्रत्येक काशीवासी एवं आस्तिक जन का कर्त्तव्य है।

श्री वेदव्यास रामनगर में

भगवान श्री विश्वनाथ की आज्ञा को शिरोधार्य कर वेदव्यास जी लोलार्क के अग्निकोण में गंगा के पार जाकर एक टीले पर शिवलिंग स्थापित कर वहीं 'शिव' की आराधना करते हुए उत्तराभिमुख हो रात-दिन काशी का दर्शन आज भी कर रहे हैं।

ऐसा लगाता है कि व्यासमुनि ने यह सोचकर कि टीला कभी नष्ट नहीं होने वाला है अतः गंगा के कगार पर उन्होंने अपना निवास स्थल वहाँ चुना। इसी महत्व को समझते हुए लगता है कि 'काशीराज' महाराजा श्री बलवन्त सिंह जी ने उसी टीले पर सन् १७४२ में शिव लिंग (बरिबण्डेश्वर) स्थापित कर अपने दुर्ग का निर्माण किया और स्वयं वहाँ अपनी राजधानी बनाई।

जिस प्रकार व्यास मन्दिर में बैठकर ठीक उत्तर दिशा की ओर काशी का दर्शन व्यासजी करते हैं उसी प्रकार महाराजा भी अपने राजभवन में बैठे सोते रात-दिन व्यासेश्वर और काशी का दर्शन परम्परानुसार करते चले आ रहे हैं।

व्यासजी का एक और स्थान 'व्यासपुर' कहा जाता है जो कि काशी के पूर्व ओर मुगलसराय जाते समय दाहिनी ओर मार्ग में पड़ता है और रामनगर स्थित व्यासजी के स्थान से लगभग तीन मील दूर पड़ता है। वहाँ भी दो हाथ के लगभग मोटा शिवलिंग व्यासेश्वर नाम से विख्यात है।

काशीवासी माघमास में इन्हें बड़े वेदोव्यास और किला वाले को छोटे वेदोव्यास की संज्ञा देते हुए दर्शन करने जाते हैं।

लगता है कि व्यास जी के दस हजार शिष्य-प्रशिष्य वहाँ बसे हों और वह स्थान 'व्यासपुर' के नाम से विख्यात हो गया। यह भी सम्भव हो सकता है कि वेदव्यास जी अपने शिष्यों से मिलने वहाँ जाते रहे हों और उसी स्थल पर बैठे हों जहाँ आज 'व्यासेश्वर' लिंग है। यह बड़ा लिंग होने से बड़े वेदव्यास और किला वाला लिंग छोटा होने से छोटे वेदव्यास के नाम से विख्यात हैं।

दुर्ग स्थित श्री व्यास जी के बायीं ओर उनके पुत्र शुकदेव जी द्वारा स्थापित लिंग से भी स्पष्ट होता है कि व्यास जी का वही स्थान है। यह बात व्यासपुर में नहीं है। दुर्ग स्थित व्यासजी के दाहिनी ओर श्री देवस्वामी (काष्ठ जिह्वा स्वामी) द्वारा स्थापित 'श्री विश्वेश्वर' का लिंग भी विद्यमान है। देवस्वामीजी ने भी व्यासजी के बगल में ही लिंग-स्थापन करना श्रेयस्कर समझा होगा।

दुर्ग के व्यासेश्वर आदि तीनों मूर्त्तियों की सेवा-पूजा भोग राग की पूर्ण व्यवस्था काशीराज की ओर से रामजी पाण्डेय आदि, वंशपरम्परा से करते चले आ रहे हैं। वर्तमान 'काशिराज' माघ मास में श्री व्यासजी को वेद-परायण सुनवाने की स्थायी व्यवस्था भी कर चुके हैं। तदनुसार ऋग्वेद, कृष्ण यजुर्वेद एवं सामवेद के अनेक ब्राह्मण अबतक व्यास जी को सम्पूर्ण शाखा का पारायण सुना चुके हैं। पारायण के समय काशिराज भी उपस्थित रहते हैं और पूर्णाहुति के दिन विद्वान का सत्कार करते हैं। श्री व्यास मंदिर के भीतर एक बड़ा तैल चित्र श्री व्यास जी का है तथा पूजन के समय का महाराजा श्री ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह जी, महाराजा श्री प्रभुनारायण सिंह जी और महाराजा श्री आदित्य नारायण सिंह जी का फोटो चित्र लगा है।

दुर्ग के इस टीले के सम्बन्ध में हम अध्याय ३० से ३१ वाले अंक के पृष्ठ ३७ पर विस्तार से वर्णन कर चुके हैं।

शिलापट्ट (रामनगर दुर्ग में)

श्री त्रिखण्डेश्वर मन्दिर पर

श्रीमद्गौतमवंशभूषणमणिस्त्रैलोक्यरक्षामणिः
स्त्रीणां कान्तमणिर्वनीयकजन-प्रख्यातचिन्तामणिः ।
पुत्रैः श्रीमनरन्जनस्य मनसारामात्मजः श्रीयुतो
वीरः श्रीबरिवण्डसिंहनृपतिर्वर्वर्त्ति सर्वोपरि ॥
यश्चतुर्दिक्षु काशीतः सौराज्यं कुरुतेतराम् ।
मान्धातेव धराधीशो येन राजन्वती मही ॥

संवत् १७९९ १७४२ ई०

श्री व्यास मन्दिर के भीतर

व्योमाष्टाङ्कशशांक (१९८०) वत्सरगताषाढ़े भृगौ पूर्णिमा
तिथ्याम् सच्चरिता पुनीतकुंवरी मातास्य काशीपतेः
सम्भूष्याश्मभिरुज्ज्वलैरभिनवैः श्यामैश्च भूरिप्रभैः
श्रीव्यासेश्वरमन्दिरं कृतवती वन्देतरं सुन्दरम्

श्री व्यास मन्दिर के बाहर

देवतीर्थो नाम दण्डी प्रार्थयन्वदति कर्मणान्देवता विष्णुः कर्मणामारम्भे विष्णुस्मरात् अन्ते च यस्य स्मृत्या चेति पठनात् यज्ञो वै विष्णुरितिवचनाच्च शिवो ज्ञानस्य देवता शिवं चतुर्थं मन्यन्त इति माण्डूक्यात् उमासहायमित्यादि-केनोपनिषदश्च ब्रह्मवादिनां शिव उपास्यः ये च सन्यासिनां गुरवो यश्चास्मा-कङ्कुलदेवो भगवान्दण्डपाणिरेतैस्सर्वैरपि स्व-स्वनामभिः शिवलिंगानि स्थापि-तानि तथाहि नारायणेन विश्वेश्वरस्स्थापितः विश्वं विष्णुरितिवचनात् ब्रह्मेश्वरादयस्तु प्रसिद्धास्सन्तीति निश्चित्य रामनगरे व्यासदेवस्य जीर्णलिंगन्ता-म्रपट्टेन पिनद्धन्दृष्ट्वा तत्पूर्वतः श्याममपरं लिङ्गं व्यासदेवेश्वराभिधानम् सन्यासी (सि) विधिना स्थापितम् आश्विनशुक्लचतुर्दश्यां बुधे वृश्चिकलग्ने बाणाभ्रनवचन्द्रमिते वत्सरे । १९०५

श्री वेदव्यास जी के जन्म का वर्णन करते हुए काशी के प्रसिद्ध शिवभ
'श्री काष्ठ जिह्वा स्वामी' (देवस्वामी) अपने मल्हार राग के पद में
प्रकार लिखा है।

व्यास जी नारायन दूसरे

नूतन घन छबि पंकज लोचन लक्षन सुभग धरे
चन्द्र असाढी मूल बरीयस तुला लगन सुधरे
सत्यवती के गरभ सिंधु ते मनहुँ चन्द्र निसरे
धरम भवन से मातु भवन लौं एक एक ग्रह परे
बुध रवि शुक्र केतु शनि गुरु शशि मंगल सुढर ढरे
पिता पराशर सुत मुष देषत बहुत अनंद भरे
जप तप ध्यान जाग व्रत सयम मानहु सुफल फरे

पद के अनुसार श्री व्यास जी की जन्म कुण्डली
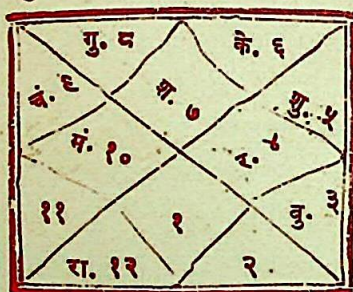
श्रीदेवस्वामी (काष्ठजिह्वा स्वामी) द्वारा विरचित शिवरात्रि महत्व

शिवजी को उतसव कवने दिन

शिव ही के सब लोग परहिं जब उतसव मानहु तेही छिन
फागुन मास रुद्र संघारी चउदस बदी भई दाहिन
नाद बिंदु शशि औ शत तारा सोमवार शिव जोगहु को गिन
अरध राति सो प्रलै समै है उत्तर चारी शिव औ इन
जैसो रूप काल गति तैसो तहां जुरति अब कर संशय जिन
शिवरात्री शिव को उतसव दिन ठीक दई शिव पद के लच्छिन
ता दिन प्रगटे देव देव ये सुगति कहां इनके चिंतन बिन